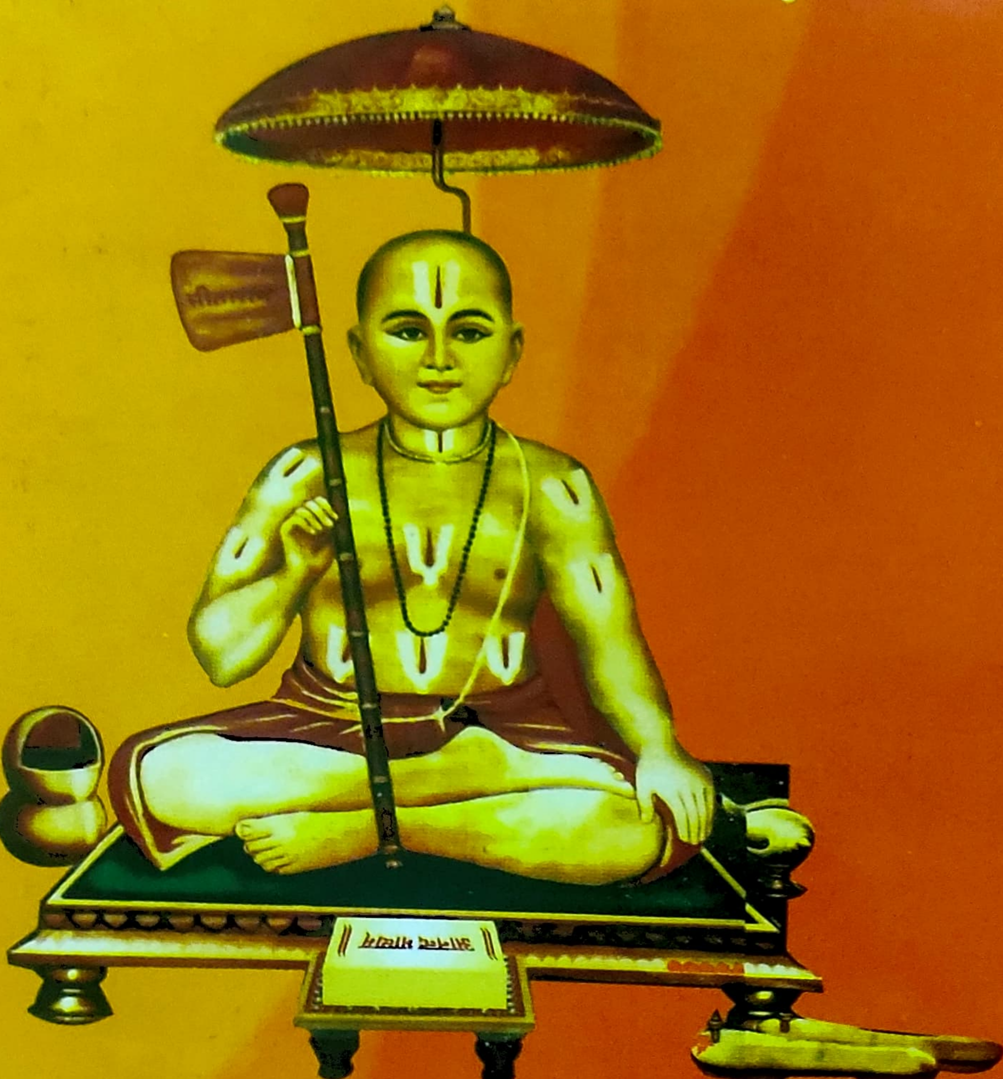
श्रीः

श्रीमते रामानन्दाय नमः।

श्रीमद् आद्य जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य भगवान की 724 वीं जयन्ती समारोह स्मारिका



सम्पादक

श्रीमहान्त तुलसीदास नव्यन्यायाचार्य

प्रकाशक

विहारीजू श्री अयोध्याजी श्रीमद् भागवत विद्यापीठ विहारिणी

श्रीमते रामानन्दाय नमः

श्रीरामानन्दसम्प्रदाय के समुन्नायक



जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य स्वामी श्री भगवदाचार्य जी महाराज

श्रौताचार्य शिरोमणि र्भगवदाचार्यः क्षमापाम्पतिः,
श्रीमद् वैष्णव धर्मरक्षणपरो व्याख्यान वाचस्पतिः।
श्रीमद्वेदविदां वरः कविवरो मान्यः सतां धार्मिकः
वाग्मी श्रीपतिपादपद्ममधुपः पूज्यः सतांराजते॥

आविर्भाव तिथि - वि.स.1937 (सन् 1880)

तिरोभाव तिथि - वि.सं.2037 (सन् 1980)

स्वामिभगवदाचार्यं सम्प्रदायोपकारकम्।
नवदृष्टिप्रदातारं प्रणमामि पुनः पुनः॥
स्वामी भगवदाचार्य को वन्दन बारम्बार।
जिनके महदुपकार को भूल न सके संसार॥

श्री आचारज जगद्गुरु बन्दौं रामानन्द,
बन्दौ रामानन्द राम सब जगद् बिहारी।
भाष्यकार भगवान् विश्वतारक अवतारी,
नश्वर सब संसार सार साँचे सीतावर।
योगानन्द विचारि भजो पद कंज निन्तर॥
रवि शशि जिनकर तेज लखि भये दीप ज्यों मन्द।
श्री आचारज जगद्गुरु बन्दौं रामानन्द॥

श्रीमते रामानन्दाय नमः

श्रीमद् आद्यजगद्गुरु स्वामी श्रीरामानन्दचार्य भगवान् का

724वीं जयन्ती समारोह स्मारिका

प्रथम संस्करण सन्– 2017
द्वितीय संस्करण – सन् 2023
तृतीय संस्करण – सन् 2024

प्रति –
मूल्य–सप्रेम पाठ
प्राप्ति स्थान– श्रीमद् भागवत विद्यापीठ, परिक्रमा मार्ग
वासुदेव घाट, श्री अयोध्याजी
स्म्पादक – श्री महान्त श्री तुलसीदास नव्यन्यायाचार्य
प्रकाशक – श्रीमद् भागवत विद्यापीठ विहारिणी
विहारीजू सरकार

पावन सहयोग – श्रीस्मृतिशरणजी
श्रीराघवकुंज रायगंज श्री अयोध्याजी

श्रीमते रामानन्दाय नमः

1. भूमिका –
2. आचार्याशीः –
3. भक्तसर्वस्व –
4. पण्डितराज, सारस्वतसार्वभौम श्रीसम्प्रदाय के समुन्नायकजगद्‌गुरु श्रीरामानन्दाचार्य स्वामी भगवदाचार्यजी महाराज का पावन चरित्र
5. श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के परमोद्धारक श्रीमत् परमहंस परिव्राजकाचार्य ब्रह्मनिष्ठ कवि तार्किक चक्रवर्ती पण्डितराज सारस्वत सार्वभौम प्रस्थान त्रयी भाष्यकार स्वामीश्रीभगवदाचार्यजी की लोकोत्तर विशिष्टता का संक्षिप्त परिचय
6. श्री सम्प्रदायदिक्प्रदर्शन ग्रन्थ का खण्डन ग्रन्थ–श्रीसम्प्रदायरक्षा

"श्रीः"

श्रीमते रामानन्दाय नमः

श्रीसीतारामाभ्यान्नमः

मन्त्रराजमहाराजसाम्राज्यैकधुरन्धरम्।
श्रीरामानन्दयतीन्द्रस्य त्रिदण्डं सादरं नुमः।।
श्रौताचार्यशिरोमणिर्भगवदाचार्यः क्षमापाम्पतिः,
श्रीमद्वैष्णवधर्मरक्षणपरो व्याख्यान वाचस्पतिः।
श्रीमद्वेदविदां वरः कविवरो मान्यः सतां धार्मिकः,
वाग्मी श्रीपतिपादपद्मधुपः पूज्यः सतां राजते।।

भगवान् श्रीसीतारामजी की असीम अनुकम्पा से प्रतिवर्ष सम्पूर्ण भारतवर्ष में जगदगुरु आद्य रामानन्दाचार्य भगवान् का जयन्ती महोत्सव बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है हम लोग भी श्री अयोध्याजी में स्वामी जी का जयन्तीमहोत्सव बड़े धूम धाम से मनाते हैं। जगद्गुरु आद्यरामानन्दाचार्य भगवान की सात सौ चौबीसवीं जयन्ती के पावन अवसर पर पण्डितराज, सारस्वतसार्वभौम उपाधि द्वय विभूषित जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज का स्मरण न करना महद् अपराध होगा। महर्षि वाल्मीकि सुन्दर काण्ड में कहते हैं—

कृते च प्रतिकर्तव्यमेष धर्मः सनातनः।

अर्थात् उपकार करने वाले का प्रत्युपकार अवश्य करना चाहिए। यदि हम प्रत्युपकार नहीं कर सकते हैं तो उनका स्मरण एवं चरण वन्दन अवश्य कर सकते हैं जैसा कि मानस में गोस्वामी जी कहते हैं –

''मो पहिं होइ न प्रति उपकारा। बन्दउं तव पद बारहिंबारा''

कुछ वर्षों पहले हमारा सम्प्रदाय श्रीरामानुजसम्प्रदाय की गुलामी के गर्त में पड़ा हुआ था। रामानन्दसम्प्रदाय के साधु आचारियों की पालकी ढोते थे अपने को रामानुजी समझते थे श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के साधु आचारियों को अपना आचार्य समझ कर साष्टांग दण्डवत् करते थे और वे लोग कहते थे रामानन्दी शूद्र होते हैं मूर्ख होते हैं। श्रीरामानन्दसम्प्रदाय के सन्तों की दुर्दशा पण्डितराज सारस्वत सार्वभौम स्वामी भगवदाचार्य जी से नहीं देखी गयी और उन्होंने इसका खुलकर विरोध किया। स्वामी श्रीभगवदाचार्य एवं स्वामीरघुवराचार्यजी तथा स्वामी श्री वैष्णवाचार्यजी इन महापुरुषों के विशेष योगदान से हमारे श्रीरामानन्दसम्प्रदाय के साहित्य का विशेष सम्बर्धन हुआ है हमारे राम इन सभी महापुरुषों के पावन चरणों में कोटिशः वन्दन करते हैं।

इस ग्रन्थ का प्रकाशन ठाकुर श्रीसीतारामजी, श्रीजानकी वल्लभलालजी, श्रीरामनाम रसिया श्रीहनुमान्जी तथा श्री गौरीशंकर भगवान् (श्रीमद् भागवत विद्यापीठ) की महती कृपाकरुणा के फलस्वरूप दास के द्वारा सुसम्पन्न हो रहा है।

इस ग्रन्थ में जो कुछ लिखा है वह सब महापुरुषों के लेखों की संग्रह मात्र है इसमें हमारा कुछ नहीं है सन् 1971 में स्वामि भगवदाचार्य शताब्दी स्मृतिग्रन्थ प्रकाशित हुआ था उसी स्मृतिग्रन्थ के आधार कुछ लेखों का पुनः प्रकाशन किया जा रहा है श्रीसम्प्रदाय रक्षा ग्रन्थ तो सैकड़ों वर्ष पूर्व स्वामी श्री भगवदाचार्य जी महाराजने लिखा था उसी समय प्रकाशित हुआ था स्वामी जी की कृपा से पुनः श्रीसम्प्रदाय रक्षा ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है दास ने बड़ी सावधानी से प्रूफ संशोधन किया है फिर भी त्रुटि हो सकती है सो सुधारि हरिजन जिमि लेहीं।

अन्त में सभी पूज्य चरण सन्तों से प्रार्थना है,

होहु प्रसन्न देहु बरदानू।
साधु समाज भनिति सन्मानू।

नाम भरोस नाम बल नाम सनेह।
जनम जनम रघुनन्दन तुलसिहिं देहु।।
जनम जनम जहँ तहँ तनु तुलसिहि देहु।
तहँ तहँ राम निबाहिब नाम सनेहु।।
ज्ञानयज्ञः सुसम्पन्नः प्रीतये राघवस्य च।
अंगीकरोतु तत्सर्वं राघवो भक्तवत्सलः।।
अनायासेन मरणं विना दैन्येन जीवनम्।
देहान्ते तव सानिध्यं देहि मे रघुनन्दन।।

सन्तसद्गुरु कृपाभिलाषी
तुलसीदास नव्यन्यायाचार्य
श्रीमद् भागवत विद्यापीठ
बासुदेव घाट श्री अयोध्याजी

का भाषा न विगाहिता किमु पुनः शास्त्रं न वा चिन्तितम्,
किं विज्ञानमहो न भावितमदो योगो न वाराधितः।
क्षेत्रं किं न हि कृष्टमत्र लिखितं किं किं न विज्ञायते,
तं सर्वस्वविभासितं भगवदाचार्यं नमामो वयम्।।

श्रीः

आचार्यशीः

नमः परमब्रह्मणे भगवते श्रीरामचन्द्राय धर्नुधारिणे।

आनन्दभाष्यकाराय भगवते रामानन्दाय नमः।

जगद् गुरु स्वामी श्रीरामानन्दाचार्य भगवान् का आविर्भाव ऐसे समय में हुआ था जब देश में सनातन धर्मियों को विधर्मी लोग परेशान कर थे उनके आस्था के साथ खेलवाड़ कर रहे थे उस समय स्वामीजी ने अवतार लेकर सनातन प्रेमियों को यह संदेश दिया कि आप सनातन धर्म में अडिग रहें जो अपने धर्म पर स्थिर रहता है उसकी रक्षा भगवान स्वयं करते हैं। कलिमल ग्रसित जीवों के कल्याणार्थ अकारण करुणावरुणालय भगवान् श्रीरामजी ही स्वामी श्रीरामानन्दाचार्य भगवान के रूप में माघ कृष्ण सप्तमी तिथि को तीर्थराज प्रयाग में अवतीर्ण हुए हैं। जैसे भगवान श्रीराम ने शबरी, कोलभिल, गीध, सुग्रीव, हनुमान् एवं विभीषण को अपना कर भक्ति का मार्ग सबके लिए प्रशस्त किया उसी प्रकार स्वामी रामानन्दाचार्य भगवान् ने कबीर दास, सेनभगत, धन्नाजाट

आदि को अपना कर यह घोषणा की –

जाति पांति पूछे नहि कोई। हरिको भजे सो हरि का होई।।

श्रीनारायण दास गोस्वामी (ना भास्वामीजी) ने लिखा है।

औरउ शिष्य प्रशिष्य एक ते एक उजागर।।
विश्व मंगलाधार सर्वसुख दशधा आगर।।

अर्थात् श्रीरामानन्दसम्प्रदाय में अनेक दिव्यरत्न प्रकट हुए है जो समय समय पर समाज को नयी दिशा देते आए हैं। श्री रामानन्द सम्प्रदाय में पण्डितराज, सारस्वतसार्वभौम जगद्गुरु रामानन्दाचार्य स्वामी श्री भगवादाचार्य जी महाराज ऐसे महापुरुष है जिनका यह सम्प्रदाय सदा ऋणी रहेगा। प. पू. स्वामी श्री भगवदाचार्य जी महाराज ने श्रीरामानन्दसम्प्रदाय के उत्थान के लिए महत्वपूर्ण योगदान प्रदान किया हैं श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के सन्तों महन्तों को सदा अपने स्वाभिमान एवं कर्तव्यपथ पर चलने के लिए प्रेरित किया है। प.पू.श्री स्वामी श्री भगवदाचार्य जी महाराज ने श्रीरामानन्दी सन्तों महन्तों को यह शिक्षा दिया कि श्रीराम भजन एवं सन्तसेवा के साथ साथ रामायण उपनिषद् एवं गीतादि का भी चिन्तन करें, शास्त्रीय चिन्तन के अभाव में

भजनीय भगवान के प्रति पूर्ण आस्था से समर्पण नहीं हो पायेगा। **संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्** इस वेदवाक्य को श्रीरामानन्दसम्प्रदाय ने ही अन्वर्थ किया है **सर्वे प्रपन्नेरधिकारिणोमताः** स्वामी श्रीरामानन्दाचार्य भगवान के इस सिद्धान्त का स्वामी भगवदाचार्य जी ने सर्वत्र प्रचार—प्रसार किया है।

कुछ लोग श्रीरामानन्दसम्प्रदाय को स्वतंत्र सम्प्रदाय नहीं मानते थे, प. पू. स्वामी भगवदाचार्य जी ने शास्त्रार्थ करके अनेक अकाट्य तर्कों से यह सिद्ध कर दिया कि श्रीजानकी द्वारा प्रवर्तित श्रीसम्प्रदाय श्रीरामानन्दसम्प्रदाय ही है पू.— स्वामीजी की ही देन है कि हमारे सम्प्रदाय में भी अनेक विद्वान् प्रकट हो रहे है। अन्त में जगद्गुरुस्वामी रामानन्दाचार्य श्री भगवदाचार्य जी के पावन चरणों में प्रार्थना है कि आप हम सभी को ऐसी शक्ति प्रदान करें कि हम सब अपने श्रीरामानन्द सम्प्रदाय की परम्परा एवं सिद्धान्त के लिए सदा जागरूक रहें।

मो पहिं होइ न प्रति उपकारा। बंदउ तव पद बारहिं बारा।।

॥ श्रीरामो विजयतेतराम् ॥

भक्तसर्वस्वम्

हे मैथिलीहृदयपङ्कजभृङ्गराज !
हे स्वीयभक्तजनमानसराजहंस!
हे सूर्यवंशविभुवैभव! रामचन्द्र !
त्वत्पादपङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥1॥

हे श्री जानकीजीके हृदयकमलके भ्रमर ! हे स्वभक्तजनों के मनोरूपमानसरोवर के राजहंस ! और हे सूर्यवंश के सर्वस्व श्रीरामजी महाराज! आपके चरणकमलका रज मेरी रक्षा करे ॥1॥

हे मैथिलीहृदयपङ्कजकञ्जनाथ!
हे भक्तवत्सल! कृपाकर ! राघवेन्द्र !
हे दीनरक्षक! शरण्य! सुखस्वरूप!
त्वत्पादपङ्कजरजः शरणं ममास्तु !॥2॥

हे श्रीजानकीजी के हृदयकमलको विकसित करने वाले सूर्य! हे भक्तवत्सल! हे कृपासिन्धु! दीनों के रक्षक! हे सबको

शरण देने वाले और हे सुखस्वरूप भगवान् श्रीरामजी महाराज! आपके श्रीचरणकमलका रज मेरी रक्षा करे ॥2॥

हे मैथिलीहृदयभूषण! कान्तकान्ते!

हे नीलपद्मरुचिराङ्घ्रियुग ! स्वयम्भो !

हे विश्वनाथ ! रघुनाथ ! वरेण्यकीर्ते !

त्वत्पादपङ्कजरजः शरणं ममास्तु!!3॥॥

हे श्रीजानकीजी के हृदयालङ्कार ! हे सुन्दरकान्तिवाले ! हे नीलकमलसमान सुन्दरचरणवाले! हे कारणरहित ! हे विश्वनाथ ! और हे प्रशस्तकीर्तियुक्त भगवान् श्रीरामजी महाराज ! आपके श्रीचरणोंका रज मेरी रक्षा करे ॥3॥

हे मैथिलीहृदयमन्दिरशुभ्रमूर्ते!

हे वायुपुत्रपरिषेवित पद्मपाद !

हे आशुतोष! जगदीश्वर! भक्तिलभ्य!

त्वत्पादपङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥4॥

हे श्रीजानकीजीके हृदयमन्दिर की सुन्दरमूर्ति! हे श्रीहनुमान्‌जी से सेवित! हे शीघ्र प्रसन्न होनेवाले, हे भक्तिमात्रसे प्राप्त करने योग्य! हे जगदीश्वर श्रीरामजी महाराज! आपके श्री चरणों की रज मेरी रक्षा करे ॥5॥

हेमैथिलीहृदयराजमणे! रमेश!
हे सर्वज्ञ! प्रणतपालक! दीनबन्धो!
सृष्टिस्थितिप्रलयलील! महानुभाव!
त्वत्पादपङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥4॥

हे श्रीजानकीजीके हृदय के चिन्तामणि! हे सर्वव्यापक ! हे प्रणतपालक! हे दीनबन्धो ! हे सृष्टि, स्थिति और प्रलयरूप लीला करनेवाले! महातेजस्वी श्रीरामजी महाराज! आपके श्री चरणकमलों का रज मेरी रक्षा करे ॥5॥

हेमैथिलीहृदयवल्लभ! रूपराशे!
हेसर्वद! श्रुतिवचस्स्तुत! राघवेश!
हेपापपुञ्जदहनानल देवदेव !
त्वत्पादपङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥6॥॥

हे श्रीजानकीजी के परमप्रिय ! हे रूपनिधे ! हे सबकी मनः कामनाको पूर्ण करने वाले, वेदवचनों से स्तुत ! हे सम्पूर्ण पापों को भस्म कर देने वाले, हे देवताओं के भी पूज्य श्रीरामजी महाराज ! आपके चरणों की धूलि मेरी रक्षा करे ॥6॥

हेमैथिलीहृदयहार ! मनोजमूर्ते।
हेशर्वरीशविमलानन! सर्वशक्ते!
हेभक्तवश्य! करुणालय! नित्यभूते।
त्वत्पादपङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥7॥

हे श्रीजानकीजी के हृदय के हार ! हे परमसुन्दर मूर्तिवाले! हे चन्द्रसमान सुन्दर मुखवाले ! हे सर्वशक्तिसम्पन्न ! हे भक्तों के वशमें रहनेवाले ! हे परमकारुणिक ! नित्यविभूतियुक्त श्रीरामजी महाराज! आपके चरणकमलों की धूलि मेरी रक्षा करे। ॥7॥

हे मैथिलीहृदयवास! जगन्निवास!
हे भूमिभारहृदनीश ! जगच्छरण्य !
हे राम! हे रघुपते! रघुवीरधीर !
त्वत्पादपङ्कजरजः शरणं ममास्तु ॥8॥

हे श्रीजानकीजीके हृदयमें निवास करने वाले, हे सर्व जगत् के आश्रय! हे पृथ्वी के भार को हरण करनेवाले ! अनीश जिसका कोई ईश न हो, अर्थात् स्वतन्त्र! हे सबको शरण देने वाले! हे रघुकुलशिरोमणि श्रीरामजी महाराज! आपके श्रीचरणो की धूलि मेरी रक्षा करे ॥9 ॥

इति श्री परमहंस परिव्राजक जगद्गुरु रामानन्दाचार्य
स्वामि श्रीभगवदाचार्य महाराजैः
1976 तमे विक्रमसम्वत्सरे प्रणीतं
भक्तसर्वस्वं समाप्तम् ॥

पण्डितराज सारस्वतसार्वभौम श्रीसम्प्रदाय के समुन्नायक जगद्‌गुरु श्रीरामानन्दाचार्य स्वामी भगवदाचार्यजी महाराज का पावन चरित्र

श्रीसम्प्रदाय के इतिहास में उन महान् विभूति महापुरुष को साधु समाज कभी नहीं भूल सकता जिनका नाम श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में पण्डितराज सारस्वतसार्वभौम महामहोपाध्याय श्रीभगवदाचार्यजी हैं। आपका जन्म पंजाब प्रान्त के स्यालकोट नगर में वि.सं. 1937 कार्तिक शुक्ल पंचमी दिन के बारह बजे हुआ था। पिता श्रीगंगादत्त त्रिवेदी माता श्रीमती माराक्षी देवी थी। आप कान्यकुब्ज ब्राह्मण वंश के थे। आठ वर्ष की आयु में ही आपका यज्ञोपवीत संस्कार हो गया था आपके बड़े भाई विद्वान थे। अतः वे ही अध्ययन कराना प्रारम्भ कर दिये। पिताजी भगवान् श्रीराम के परम भक्त थे, वे आपको प्रथम ही श्रीहनुमान चालीसा कण्ठस्थ कराकर श्रीरामचरितमानस पढ़ाया। सोलह वर्ष की आयु में काशी आकर संस्कृत का अध्ययन करने लगे। आप हिन्दी में सुन्दर कविताओं की भी रचना करने लगे जो कि लखनऊ से

बसुन्धरा नाम की पत्रिका निकलती थी उसमें प्रकाशित होती थी। आपने विद्यावाचस्पति पण्डित सरयूदासजी आदि से न्याय वेदान्त, व्याकरणादि का पूर्ण रूप से अध्ययन किया। पण्डित श्रीसत्यव्रत सामश्रमीजी से कलकत्ता जाकर वेदों का अध्ययन किया और वेदतीर्थ तथा वेदरत्न उपाधियों से अलङ्कृत होकर काशी में आ गये। काशी के विद्वानों ने भी आपके वैदुष्य से प्रभावित होकर आपको पण्डितराज और सारस्वत सार्वभौम की उपाधियाँ प्रदान की। शास्त्र ज्ञान पीपासा के उद्देश्य से कुछ दिन आप आर्य समाज में भी रहें। हरिद्वार में भी कुछ दिन अध्ययन अध्यापन के क्रम से रहकर फिर अयोध्याजी आ गये। अवध में श्री पण्डित रघुवराचार्यजी से आपकी घनिष्ठ मित्रता हो गई और उन्हीं की प्रेरणा से बडा स्थान के श्री महान्त श्रीराममनोहरप्रसादाचार्यजी से विधिवत् श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठविद्वान् विरक्त वैष्णवों सन्तों के समक्ष पंच संस्कार पूर्वक श्रीराम मन्त्र विरक्त दीक्षा से दीक्षित हुए। आपका पूर्व नाम सर्वजित् था। पूज्य गुरुदेव ने आपका नाम भगवद्दास रखा। आप जैसे विद्वान् के दीक्षित होने से बिन्दुगाद्याचार्य श्रीराममनोहर प्रसादाचार्यजी अत्यन्त गौरव एवं हर्ष

का अनुभव करने लगे। श्रीरामानन्दाचार्यजी के बाद में श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में विद्वानों की कमी होने लगी और कुछ सिद्ध सन्त इधर ध्यान न देकर श्रीराम भजन और सन्त सेवा में ही लीन रहें इधर अवसर पाकर दाक्षिणात्य रामानुजी श्रीरामानन्द सम्प्रदाय की परम्परा को श्रीरामानुजसम्प्रदाय के भीतर लिखने लगे और विद्वता के प्रभाव से श्रीरामानन्दियों पर अपना वर्चस्व जमाने लगे। यहां तक कि भगवान् श्रीरामजी के चरणामृत को भी हेय बताने लगे। श्रीराम मन्दिर में जाकर साष्टांग दण्डवत् करने में भी लज्जा का अनुभव करने लगे और श्रीराममन्त्र की भी निन्दा करने लगे। रामानुजियों का कहना था कि रामानुज सम्प्रदाय के अन्तर्गत ही श्रीरामानन्द सम्प्रदाय है, वह स्वतन्त्र सम्प्रदाय नहीं है। उक्त बात का समर्थन करने वाले कुछ गिने चुने लोग अर्धरामान्दीय भी थे जिनको अपने स्वयं का भी मालुम नहीं था कि हम रामानुजी हैं या श्रीरामानन्दीय। क्योंकि श्रीराम मन्त्र लेकर भी अपने को रामानुजी मानना। कितने बड़े साहस की बात है इस विवाद को खत्म करने के लिए दो संस्थायें बनी। श्रीरामानन्दीय वैष्णव महामण्डल एवं पुरातत्त्वानुसंधायिनी समिति। रामानुजवादियों की तरफ से (1)

रामटहलदासजी (2) शत्रुघ्नदासजी (3) बलभद्रदासजी (4) रामशोभादासजी (5) रामनारायणदासजी ये मिलावटी अर्धरामानुजी और अर्धश्रीरामानन्दीय पांच व्यक्ति थे और इनके पक्ष में एक प्रयाग में तुलसीदासजी का बड़ा स्थान भी था।

श्रीरामानन्दियों की तरफ से स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी और स्वामी श्रीरघुवराचार्यजी। ये दोनों विद्वता के धनी थे। सभी श्रीरामानन्दियों का कहना था कि इन दोनों विद्वानों का जो मत होगा। वही हम सब को मान्य होगा। अनी आदि अखाडे भी इन्हीं के पक्ष में थे। शास्त्रार्थ युद्ध स्थल श्रीहनुमानगढ़ी में रखा गया था। शास्त्रार्थ का जो समय रखा गया था। उस समय परीक्षा चल रही थी। अतः श्रीरघुवराचार्य मुझे परीक्षा देने जाना है यह कहकर मुजफ्फरपुर चले गये। अब श्रीरामानन्दियों के पक्ष से शास्त्रार्थ युद्ध में केवल श्रीभगवदाचार्यजी बचे। निश्चित समय पर दोनों दलों के सभी सन्त, महन्त, श्रीमहन्त श्रीहनुमानगढ़ी में पहुंच गये किन्तु श्रीभगवदाचार्यजी की गर्जना सुनकर वादी पक्ष के रामटहलदासादि का पता नहीं कब और कहां गायब हो गये। शास्त्रार्थ का निश्चित समय प्रतिक्षण बीत रहा था किन्तु वादी पक्ष

से शास्त्रार्थ करने वाला कोई दिखाई नहीं दे रहा था। अन्त में रामानुजियों की ओर से शास्त्रार्थ करने के लिए जो नियत किये गये विद्वान् नहीं आये, किन्तु श्रीभगवदाचार्यजी के श्रीगुरुदेव श्रीराममनोहर प्रसादाचार्यजी विपक्ष का प्रतिनिधित्व करने शास्त्रार्थ स्थल हनुमानगढ़ी में आ पहुंचे। उनको देखते ही सभा में सन्नाटा सा छा गया, क्योंकि उस समय अयोध्या में बड़ा स्थान बिन्दुगाद्याचार्यजी की बड़ी धाक थी। सभा मण्डल में एक तरफ वनराज के समान गुरुदेव बिन्दुगाद्याचार्यजी बैठे और दूसरी ओर सिंह शावक के समान शिष्य श्रीभगवदाचार्यजी पहले से हीं उपस्थित थे। सभा मण्डल खचाखच भरा हुआ था। बिन्दुगाद्याचार्यजी के सामने किसी की बोलने की ताकत नही थी। सब लोग विजयश्री किसको वरण करती है यह शान्त भाव से उत्सुकता पूर्वक इन्तजार कर रहे थे। अब गुरु और शिष्य के मध्य शास्त्रार्थ नहीं रामानुजियों और रामानन्दियों के मध्य शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। श्रीगुरुदेव बिन्दुगाद्याचार्यजी ने कहा कि श्रीरामानन्द सम्प्रदाय और श्री रामानुज सम्प्रदाय एक ही है। शिष्य श्रीभगवदाचार्यजी ने कहा नहीं गुरुदेव दो है। अब तो गुरुदेव शिष्य पर एकदम लाल—पीले

हो गये। उस समय हनुमानगढ़ी के गद्दीनशीन श्रीमहान्तजी खड़े होकर बिन्दुगाद्याचार्यजी से बोले—श्रीमान् महान्तजी! आपको जो भी पूछना हो शान्त भाव से पूछिये। आप डाट—डपट नहीं कर सकते क्योंकि भगवद्दासजी इस समय आपके शिष्य नहीं अपितु सम्पूर्ण श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के एकमात्र अध्यक्ष हैं। गुरुदेव शान्त हुए और कहा कि सिद्ध करो कैसे रामानुज सम्प्रदाय और श्रीरामानन्द सम्प्रदाय अलग—अलग है। अब गुरुदेव के समक्ष शिष्य ने सिद्ध किया—

लक्ष्मी नाथ समारम्भां नाथयामुन मध्यमाम्।
अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम्।।
सीतानाथ समारम्भां रामानन्दार्य मध्यमाम्।
अस्मदाचार्यपर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम्।।

(1) रामानुज सम्प्रदाय का आरम्भ लक्ष्मी नाथ से होता है।

(2) और श्रीरामानन्द सम्प्रदाय का आरम्भ सीतानाथ से होता है। श्रीरामानन्द सम्प्रदाय और श्रीरामानुज सम्प्रदाय का प्राय: सब आचार व्यवहार भी अलग (भिन्न) है।

(3) **श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में श्रीराम का ही परत्त्व है।** और श्री

रामानुज सम्प्रदाय में नारायण का परत्त्व है।

(4) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में सम्पूर्ण भगवन्मंत्रों में सम प्रेम भाव रहते हुए भी श्रीराममन्त्र ही सर्वोत्कृष्ट है। उनके यहां श्रीराममन्त्र—श्रीकृष्ण मन्त्र इत्यादि तुच्छ समझे जाते हैं।

(5) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में किसी मन्त्र की निन्दा नहीं हैं। उनके सम्प्रदाय में अन्य मंत्र निन्दनीय हैं।

(6) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में ऋग्—यजु—साम और अथर्वादि ही वेद माने जाते हैं। रामानुज सम्प्रदाय में द्रविड़ प्रबन्ध को भी।

(7) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में प्रसादान्त और शरणान्त नाम का व्यवहार होता है उनके यहां प्रसादान्त और शरणान्त नाम का व्यवहार नहीं होता हैं।

(8) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में तुलसी की कण्ठी परमावश्यक हैं, उसको हमेशा धारण करना ही धर्म हैं। उसके बिना किसी का जल तक ग्राह्य नहीं हैं। परन्तु उनके सम्प्रदाय में यह सब कुछ नही हैं।

(9) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के वैष्णव रामानुज सम्प्रदाय के ब्राह्मणों का पक्व अन्न ग्रहण करते है किन्तु वे लोग श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के ब्राह्मणों का अन्न नहीं ग्रहण करते हैं।

(10) हमारे यहां श्रीसम्प्रदाय का ही दूसरा नाम श्रीरामानन्द सम्प्रदाय है और उनके यहां नहीं हैं।

(11) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में किसी भी व्रत में रात–दिन उपवास करते हैं परन्तु उनके यहां रामनवमी एवं कृष्णाष्टमी इत्यादि पुण्य दिनों में जन्म के बाद में अन्न ग्रहण करते हैं।

(12) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में भक्ति के अधिकारी मनुष्य मात्र है परन्तु उनके यहां वेदादि पढ़ा हुआ द्विज मात्र ही है।

(13) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में आरम्भ से रहस्य त्रय का उपदेश होता आया है और रामानुज सम्प्रदाय में नहीं।

(14) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में भगवत् पूजा अर्चा में शंख का प्रयोग होता है परन्तु श्रीरामानुज सम्प्रदाय में शंख अपवित्र माना जाता है।

(15) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में शालग्राम के साथ गोमती चक्र रखना परमावश्यक है किन्तु रामानुज सम्प्रदाय में नहीं हैं। (विशेष शास्त्रार्थ श्रीसम्प्रदायरक्षा ग्रन्थ में देखें)

अन्त में श्रीभगवदाचार्यजी ने अपने गुरुदेव से प्रश्न किया कि—हे गुरुदेव! हम रामानन्दीय सम्प्रदायी हैं या पन्थाई हैं। इस प्रश्न को सुनकर श्रीगुरुदेव संकट में पड़ गये कि यदि इनको सम्प्रदाय कहता हूँ तो रामानुजियों की पराजय होती है और यदि पन्थाई कहता हूँ तो ये रामानन्दियों का विशाल जनसमूह क्रुद्ध होकर मुझ पर अभी टूट पड़ेगा। श्रीगुरुदेव से कुछ भी उत्तर देते नही बना और वे सभा से मौन अवस्था में ही उठ कर चले गये। इधर वैजयन्ती माला श्रीभगवदाचार्यजी के गले में पड़ी। यह उनकी साम्प्रदायिक विजय थी। स्वामीजी पर मां श्रीकिशोरीजी की कृपा थी उन्होंने अनेक सिद्धान्त के विषय में पादरी, मौलवी और आर्य समाजियों के साथ शास्त्रार्थ किया और विशेषता यह रही कि सर्वत्र आप विजयी रहे। आप साम्प्रदायिक महाकवि थे। रामानन्द दिग्विजय महाकाव्य, भारत पारिजात, पारिजातापहार, पारिजात सौरभम् और भी अनेक संस्कृत महाकाव्यों की आपने

रचना की। आपने दिव्य स्तोत्र कलाप नामक ग्रन्थ की भी रचना की। विरक्त समाज का कौनसा आश्रम माना जाय? इस विवाद को मिटाने के लिए आपने आश्रमकंटकोंद्धार नामक ग्रन्थ की रचना कर के इस समस्या का समाधान किया। आप हिन्दी, गुजराती, फारसी, बंगलादि भाषाओं के विद्वान थे। आपकी अनेक प्रतिभाओं में से एक विशेष प्रतिभा यह भी थी कि एक साथ दोनों हाथों से भिन्न–भिन्न विषय लिख लेते थे। आपके सत्प्रयत्न से श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के सन्तों में निज आचार्य निष्ठा उपास्यदेव के प्रति अविचल श्रद्धा, भक्ति और अपने संस्कारों–संस्कृतियों के प्रति पूर्ण आस्था उत्पन्न हुई। श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के सम्पूर्ण विरक्त साधु समाज ने मिलकर वि.स. 2033 माघ मास में प्रयाग कुम्भ मेला के अवसर पर आपकी इच्छा न रहने पर भी जगद्गुरु श्रीरामानन्दचार्यजी के पद पर अभिषिक्त किया। आपके जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजी बनते ही सम्पूर्ण श्रीसम्प्रदाय में अपूर्व प्रसन्नता की लहर छा गई। जगद्गुरु बनने के बाद स्वामीजी कुछ वर्षों तक यहाँ निवास करने के पश्चात् वि.सं. २०३७ में कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी के दिन भगवान् श्रीराम के साकेत धाम में उनकी नित्य सेवा में पधार गये।

श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के परमोद्धारक- श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य ब्रह्मनिष्ठ कवितार्किकचक्रवर्ती पण्डितराज सारस्वत सार्वभौम प्रस्थानत्रयी भाष्यकार स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज की

लोकोत्तर विशिष्टता का संक्षिप्त परिचय

लेखक–स्वामी रामचरणशरण जी शास्त्री (बिहार)

हिन्दू धर्मोद्धारक वैदिक श्रीसम्प्रदायाचार्य जगद्गुरु श्री १००८ स्वामी श्री रामानन्दाचार्य जी महाराज द्वारा संवर्द्धित विशिष्टाद्वैत–सम्प्रदायसूर्य आच्छन्न हो गया था। अतएव विशुद्ध श्रीवैष्णव (श्री रामानन्दीय श्री वैष्णव) जन दिग्भ्रमित हो चुके थे। स्वसम्प्रदाय–निष्ठा, आत्मगौरव, निज धर्म की उत्कर्षता अपने यथार्थ स्वरुप को भूल चुके थे। वे साधारण वैष्णव नाम से सम्बोधित किए जा रहे थे। पतितावस्था की ऐसी पराकाष्ठा हो चुकी थी कि भारवाहकों की भांति दाक्षिणात्य आचार्यों की पालकी अपने कन्धों पर उठाने में थोड़ी भी लज्जा और हीनता का

अनुभव श्री रामानन्दीय नहीं कर रहे थे। सर्वत्र दुत्कार, तिरस्कार, फटकारों को सहकर भी थोड़ी भी आत्म– ग्लानि नहीं हो रही थी। आचारियों द्वारा श्रीराम कृष्ण–मन्त्रों की निन्दा की जा रही थी। रामकृष्ण मन्त्र अवैदिक है, क्षुद्रफलदाता है, इन मन्त्रों के उपदेष्टा आचार्य नहीं हो सकते, रामकृष्ण मन्त्रों से मुक्ति नहीं मिलती, इत्यादि अनर्गल, नास्तिकता तथा मूर्खतापूर्ण बातों का प्रचार किया जा रहा था। फलतः उत्तर भारत के विशुद्ध श्री रामानन्दीय श्री वैष्णव श्री रामानुज सम्प्रदाय के समाश्रित होते जा रहे थे। कंठियों को उतार कर शंख–चक्रांकित हो रहे थे। कितने ही श्री राममन्दिर टूटकर लक्ष्मीनारायण मन्दिर के रूप में बदल चुके थे। कतिपय प्रसिद्ध धनुर्धारी भगवान् राम के मन्दिरों को तोड़ कर दाक्षिणात्य शैली में लक्ष्मीनारायण मन्दिर बनवाने का नक्शा बनना आरम्भ हो गया था। उत्तर भारत के श्री रामानन्दीय श्रीवैष्णव अपने समस्त प्रभुत्व, गौरव–गरिमा, उत्कर्षता, पावनता के साथ ही अपने अपने पूर्वाचार्यों की लोकोत्तर महत्ता को भी प्रायः भूल चुके थे। पतितपावन सीताराम के श्री रामायुध की अमोघता के पवित्रतम माहात्म्य को भी सर्वथा भूल चुके थे। सरल स्वभाव वाले श्रीरामानन्दीय श्रीवैष्णव जन मायाजाल में

फसकर सिंहशावक की भाँति अपने यथार्थ सत्यसनातन स्वरूप तथा विमल लोकविश्रुत वैभवों को भूलकर निविडान्धकार में भटक रहे थे। ऐसे भीषण संकट काल में एक प्रबलतम प्रतापी पथदर्शक की अतीव आवश्यकता थी।

सर्वेश्वर श्रीराम की परमानुकम्पा से अयोध्या के बड़े स्थानाधिपति, बिन्दुश्रीपीठाचार्य, स्वामी श्रीराम–मनोहरप्रसादाचार्यजी महाराज के शिष्यरूप में सन् 1919 ई. में श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के परमोद्धारक, निखिल शास्त्र–निष्णात स्वामी श्री भगवदाचार्य जी महाराज का आविर्भाव हुआ। वेद, व्याकरण, तर्क– शास्त्र, निरुक्त, साहित्य आदि विविध विद्याओं से युक्त तथा परिपूर्ण दिव्य प्रकाश–पुञ्ज–संवलित महापुरुष के श्रीअवध में पदार्पण से श्रीरामानन्द–सम्प्रदाय अक्षय दिव्यालोक से आलोकित हो गया। अज्ञानियों द्वारा फैलाया हुआ निबिड़ान्धकार सत्वर वैसे ही विलुप्त हो गया, जैसे राहु केतु से पूर्ण ग्रसित होने के पश्चात् प्रखरतर सूर्योदय तथा चन्द्रोदय होने से दिग्दिगन्त । स्वामी श्रीभगवदाचार्य महामार्तण्डोदय से दिवान्धकार रूपी रामानन्द सम्प्रदाय शत्रु अपने कोटरों में आश्रय लेने लग गए।

श्रीवैष्णवीय दीक्षा से दीक्षित होने पर स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज ने साम्प्रदायिक सिद्धान्त रहस्य ग्रन्थों का अन्वेषण आरम्भ कर दिया। उस समय रामपटल, सिद्धान्तपटल, श्रीरामस्तवराज आदि कुछ ग्रन्थ ही उपलब्ध थे। अनेक ग्रन्थों पर रामानुजीय आवरण लग चुके थे। श्रीसम्प्रदायाचार्य रामानन्द स्वामी के प्रमुख ग्रन्थ श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर रामानुजीय आवरण से ऐसा आवृत हो चुका था कि सामान्य विद्वज्जनों की बुद्धि उस दिव्य ग्रन्थरत्न की उत्कृष्टता को समझ नहीं रही थी। अतएव श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के शुद्धीकरण के पवित्र उद्देश्य से विक्रम संवत् 1976 में अयोध्या में स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज ने 'पुरातत्त्वानुसन्धायिनी समिति' और 'श्रीरामानन्दीय श्रीवैष्णव महामण्डल' की स्थापना की। इन उभय संस्थानों द्वारा साम्प्रदायिक ग्रन्थों तथा पुरातत्वों का अनुसन्धान अन्वेषण प्रारम्भ हो गया। रैवासाद्वारापीठाचार्य स्वामी श्रीअग्रदेवाचार्यजी महाराज द्वारा लिखित मन्त्रराज—गुरुपरम्परा और श्रीमद्वाल्मीकि संहिता की उपलब्धि हुई। उन दोनों ग्रन्थों का मुद्रण—प्रकाशन हुआ। पश्चात् ''रहस्योद्धाटन'' के प्रकाशन ने तो प्रशान्त श्रीरामानन्दसम्प्रदाय में

भीषण हलचज एवम् कोलाहल उत्पन्न कर दिया। तात्कालिक विज्ञप्तियाँ उस गुरु–परम्परा आन्दोलन की परिचायिका है। खेद है कि आज उन सभी विज्ञप्तियों में से कुछ ही उपलब्ध हो सकी हैं।

यद्यपि उपर्युक्त दोनों संस्थाओं का संचालन तथा श्रीगुरुपरम्परा–युद्ध का नेतृत्व स्वामी श्रीभगवदाचार्य जी महाराज ही कर रहे थे, किन्तु प्रच्छन्न रूप से नाम बदलकर। ऐसा इसलिए किया जा रहा था कि उपर्युक्त स्वामीजी का इस श्रीसम्प्रदाय में अभिनव आगमन हुआ था और उस समय अयोध्या में पूज्यपाद स्वामी श्रीराममनोहरप्रसादाचार्यजी महाराज के वर्चस्व के विरुद्ध कुछ भी करना असंभव नहीं, तो कठिनतम कार्य अवश्य था। यह इसलिए कि वे रामानुजियों के मायाजाल में बुरी तरह से फंस चुके थे। उनके पार्श्ववर्ती एक–दो बूढ़े उनके विचारों के समर्थक थे। एक दो नवयुवक छात्र उनकी दया पर पालित– पोषित होने के कारण अपनी जीभ भी नहीं हिला सकते थे। अतः विज्ञप्तियों द्वारा उत्तर–प्रत्युत्तर के परिणाम स्वरूप रामानुजीय पक्ष की ओर से श्रीरामानन्दीय श्रीवैष्णव–पक्ष के नेता को शास्त्रार्थ के लिए ललकारा गया। फलस्वरूप सन् 1920 ई० के प्रारम्भ का हनुमान् गढी अयोध्यावाला ऐतिहासिक गुरु–शिष्य–शास्त्रार्थ (स्वामी

श्रीराममनोहरप्रसादाचार्यजी महाराज और स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज। का) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय तथा श्रीरामानुज सम्प्रदाय पार्थक्य विषय पर शास्त्रार्थ हुआ। इसमें देवों के गुरु बृहस्पति के समान तेजप्रताप विद्या बुद्धिशाली स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज का विजयश्री ने समालिङ्गन किया । श्रीरामानन्द सम्प्रदाय विजयवैजयन्ती दसों दिशाओं में लहराने लगी।

यहाँ यह स्मरणीय है कि अयोध्या के तात्कालीन श्रीरामानन्दीय रामानुजियों ने जान—बूझकर स्वामी श्रीराममनोहरप्रसादाचार्यजी महाराज को रामानुजीय पक्ष की ओर से शास्त्रार्थ के लिए इस हेतु से खड़ा किया था कि उस ऐतिहासिक क्रान्ति के अग्रदूत और प्रधाननेता स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज ही थे और इनके अतिरिक्त अन्य किसी में ऐसी प्रतिभा और क्षमता न थी जो शास्त्रार्थ के कर्कश क्षेत्र में उतरने का दु:साहस करता और अयोध्या के पुरुषसिंह तथा विद्वत्प्रकाण्ड स्वामी श्रीराममनोहरप्रसादाचार्यजी महाराज के समक्ष विपक्षी रूप से शास्त्रार्थ के लिए सन्नद्ध होना तो सर्वथा असम्भव ही था। महाप्रतापी गुरु के समक्ष नवीनतम शिष्य शास्त्रार्थ के लिए समुद्यत हो नहीं सकता। अत: रामानुजीय पक्ष की विजय सरलता

से हो ही जावेगी किन्तु 'चौबे गए छब्बे बनने और दूबे बनकर लौटे' इस लोकोक्ति का चरितार्थ रामानुजदल में हो गया। ज्यों ही स्वामी श्रीराममनोहरप्रसादाचार्यजी महाराज ने हनुमानगढ़ी में शास्त्रार्थ के लिए श्रीरामानन्दसम्प्रदाय में क्रान्तियुग लानेवाले को ललकारा त्यों ही स्वामी श्रीभगवदाचार्य जी महाराज ने महती शालीनता, किन्तु विनम्रता के साथ प्रत्युत्तर के लिए सर्वथा सन्नद्ध होकर उनके पक्षों का समुचित उत्तर दिया। आशातीत उत्तर प्रत्युत्तर पाकर श्री गुरुजी महाराज ने निज प्रिय तथा प्रगल्भ शिष्य को विजय–प्रदान किया।

रामानुजदल की ओर से 'श्रीसम्प्रदाय दिक् प्रदर्शन' नामक पुस्तिका छपी, जिसकी समालोचना 'श्री– सम्प्रदायरक्षा' नामक पुस्तक द्वारा स्वामी श्री भगवदाचार्यजी महाराज ने की। इसके पश्चात् श्रीरामानन्दसम्प्रदाय की विजय–दुन्दुभि दसों दिशाओं में निनादित हो गई। तदुपरान्त भी रामानुज दल हतोत्साह न हुआ। उत्तरोत्तर श्रीरामानन्दसम्प्रदाय के विरुद्ध वह निरन्तर कुचेष्टा में रत रहा। विभेद–नीति का आश्रय लेकर कुछ न कुछ उपद्रव करता–करवाता रहा।

कालक्रमानुसार संवत् 1978 वि० में उज्जैन का चढ़ाव

आया। कुछ रामानुजियों को पालकी (शिविका) पर चढ़कर राजकीय स्नान (शाहीस्नान) करने की पुरानी स्मृति जागरित हुई। अतः उज्जैन में पुनरपि वितण्डावाद खड़ा किया गया। तोताद्रि–स्वामीजी के प्रतिनिधिरूप स्वामी श्रीरामप्रपन्न रामानुजदासजी स्वामी श्रीभगवदाचार्यजीमहाराज के साथ मन्त्रराज गुरुपरम्परा विषयक शास्त्रार्थ के लिए क्षेत्र में उतर पड़े। किन्तु शास्त्रार्थ में सर्वथा पराजित होकर श्रीरामप्रपन्न रामानुजदासजी ने रामानुजियो को पालकी पर चढ़कर शाही स्नान करने की तीव्र अभिलाषा पर सदा के लिए पानी फेर दिया। शास्त्रार्थ की विजयमाला से दूसरी बार भी स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज महती उत्कर्षता के साथ सुशोभित हुए और श्रीरामानन्दीय श्रीवैष्णवों का सदाके लिए पालकी उठाने से वैसे ही छुटकारा मिल गया, जैसे राजा रहूगण की पालकी ढोने से जडभरत को।

उज्जैन चढ़ाव का जब अत्यल्प समय अवशिष्ट रह गया था तब स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराजद्वारा ही लिखित 'रहस्योद्घाटन' नामक पुस्तक, जो श्रीमैथिलीशरण पाण्डेय के नाम से प्रकाशित हुई थी, का अपूर्ण, अप्रासंगिक तथा सर्वथा अनर्गल उत्तर 'तत्त्वोद्बोधन' नामक पुस्तक द्वारा प्रतिवादी

भयङ्कर मठाध्यक्ष स्वामी अमन्ताचार्य जी महाराज की ओर से दिया गया। चतुः साम्प्रदायिक शिविरों (मुकामों) के उठने में केवल तीन दिन ही बचे थे तब तत्वोद्‌बोधन उज्जैन में बंटा। उस पुस्तक को देखते ही कतिपय पण्डितम्मन्य तो सर्वथा घबरा गए और बोल उठे कि 'भला प्रतिवादिभयंकर मठाधिपति की ओर से प्रकाशित पुस्तक का खण्डन कौन कर सकता है?' किन्तु सम्यक्तया (समर्थ) स्वामी श्री भगवदाचार्यजी महाराज ने उसी रात में कुछ घंटों के अन्दर ही उपर्युक्त पुस्तक का खण्डन 'तत्त्वोद्‌बोधनमीमांसा' नामक पुस्तक द्वारा करके श्रीलक्ष्मीविलास स्टीम प्रेस, इन्दौर में मुद्रित करा कर तीसरे दिन ही समस्त देश में वितरित करवाकर लोगों को आश्चर्य में डाल दिया। यह खण्डन भी श्रीमैथिलीशरण पाण्डेय के नाम से ही संवत् 1978 वि०(सन् 1921ई०) में श्रीस्वामीजी महाराज ने किया था। उपर्युक्त शास्त्रार्थ और खण्डन ने सदा के लिए रामानुजदल को निराश कर दिया। फिर भी रामानुजीय लोग शान्ति से बैठ न सके। उत्तर के कुछ वैष्णव पंडितों (जिन्हें दाक्षिणात्य वैष्णव हम समझते हैं) को माध्यम बनाकर पालकी पर चढ़ने का उन्होंने प्रयत्न जारी रखा, किन्तु अद्यावधि भी उन्हें सफलता न मिली है और न भविष्य में

मिलने की आशा है।

हरिद्वार के कुम्भमेले के पूर्व वृन्दावन में एक मास का कुम्भमेला हुआ करता है। संवत् 1983 में वृन्दावन का कुम्भ मेला था। रामानुज दल में कुछ मास पूर्व से ही उछल–कूद यहाँ हो रही थी। रामानुजीय लोग वृन्दावन के उस ऐतिहासिक कुम्भ मेले के समय दान–दक्षिणा पुरस्सर एकादशी के दिन की प्रदक्षिणा में पालकी पर चढ़कर शोभा–यात्रा करना चाह रहे थे। श्रीरामानन्दसम्प्रदाय की ओर से इसका भीषण विरोध हुआ और चार सम्प्रदाय खालसे में रामानुजियो से स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज का निर्णायक शास्त्रार्थ हुआ। अनेक पण्डितों के समक्ष यह सिद्ध हो गया कि रामानुजियों के ग्रन्थों में रामकृष्ण और राधा की निन्दा लिखी है। रामानुजदल के साथ आचार विचार और व्यवहार का चतुःसाम्प्रदायिक वैष्णवों, विशेषकर रामानन्दीय श्रीवैष्णवों के आचार विचार व्यवहार का कुछ भी मेल नहीं है। सिंहपौर पर (पुराने श्रीगोविन्दजी के मन्दिर, वृन्दावन में) भी रोमांचकारी ऐतिहासिक शास्त्रार्थ हुआ। अवसान में अस्त्र–शस्त्रों का भी व्यवहार हुआ। मुकदमेबाजी भी हुई। श्रीरामानन्दसम्प्रदाय के महाप्रतापी नेता स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज के तेज

प्रताप के प्रभाव से रामानुजदल को पालकी पर चढ़कर शोभायात्रा निकालने की आशालता पर सर्वदा के लिए भीषण तुषाराघात हो गया। रामानुजदल का रामदल में आने का मार्ग सदा के लिए अवरुद्ध हो गया। यह सब होते हुए भी गुप्त रूप से अपने हथकण्डों द्वारा रामानुजियों ने 'प्रस्तुत प्रसंग' आदि पुस्तक प्रकाशित करके रामानन्दियों को पथभ्रष्ट करने का प्रयत्न जारी रखा। इधर श्रीसम्प्रदाय के अन्यतम नेता स्वामी श्रीभगवदा–चार्यजी महाराज भी ईंट का उत्तर पत्थर से देते रहे। 'प्रस्तुत प्रसंग' आदि पुस्तकों का खण्डन 'परम्परा–परित्राण' तथा 'प्रस्तुत–प्रसंगभंग' आदि पुस्तकों द्वारा होता रहा। इस प्रकार से स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज श्रीरामानन्दसम्प्रदाय श्रीरामानुज सम्प्रदाय के पार्थक्य को सिद्ध करने में और श्रीगुरु परम्परा–शास्त्रार्थ में सदा ही विजयी होते रहे। श्रीरामानन्दसम्प्रदाय में इस क्रान्तियुग का इतिहास स्वर्णाक्षरों में लिखा जावेगा।

''लोग कहते हैं कि बदला करता है जमाना।
पर पूरे मर्द वे हैं, जो जमाने को बदल देते हैं।''

इस सूक्ति को स्वामीश्रीभगवदाचार्य जी महाराज ने

अक्षरशः चरितार्थ करके दिखला दिया। असाध्य को साध्य में तथा असंभव को संभव में परिणत करके आरम्भ से अद्यावधि समानरूप से श्रीरामानन्दसम्प्रदाय का नेतृत्व करते हुए श्रीसम्प्रदाय श्री की अभिवृद्धि की है और कर रहे है। स्वामी जी महाराज के अनेक अवदान हैं जो निम्नांकित है। यथा–

अनेक स्तोत्रग्रन्थ, श्रीरामानन्ददिग्विजय, त्रिरत्नी, दिव्यस्तोत्रकलाप, प्रस्थानत्रयीभाष्य, साम–यजुर्वेद–भाष्य, विशिष्टाद्वैतरहस्य, श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर का संशोधन तथा हिन्दी अनुवाद, रामपटल संशोधन और हिन्दी टीका, भगवत्पूजन–पद्धति, विशिष्टाद्वैत- दर्शन, भक्तिशास्त्र, वेदान्तदर्शन–वैदिक भाष्य, ब्रह्म– सूत्रों पर सूत्रप्रसादिनी वृत्ति, तत्त्वार्थपंचक, श्रीमद्‌भगवद्‌गीता की हिन्दी–गुजराती टीका, श्रीरामयज्ञपद्धति (यह प्रसिद्ध राजकोट यज्ञ के समय पूज्यस्वामीजी ने लिखी थी, जो अमुद्रितावस्था में साकेतवासी परमहंस श्रीरणछोड़दासजी ने अपने पास रख ली थी), ब्रह्म–सूत्रों पर अभिनव श्रीरामानन्दभाष्य आदि श्रीसम्प्रदायोपयोगी शताधिक ग्रन्थों की संरचना करके श्रीरामानन्दसम्प्रदाय का सभी प्रकार से उत्थान किया । सम्प्रदाय के अङ्ग–प्रत्यङ्गों को परिपुष्ट

करने में पूज्यपाद स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज सम्प्रति सर्वोत्कर्षता के साथ विराजमान हो रहे हैं। काशी के श्रीरामानन्द–पीठ (पंचगंगाघाट स्थित श्रीमठ) के जीर्णोद्वार के लिए स्वामीजी ने अनेक प्रयत्न किये। उनमें अनेक बाधाएँ उपस्थित हुई। अन्यत्र भी श्री रामानन्द–पीठ के निर्माण के उपाय सोचे गए, किन्तु फिर भी बाधा उपस्थित हुई। उन्हीं प्रयत्नों के कारण अब काशी में सर्वसम्मत श्रीरामानन्दपीठ के निर्माण का उपक्रम किया जा रहा है, इसका श्रेय भी स्वामीजी को ही है।

पूज्यस्वामीजी यथासमय विविध पत्र–पत्रिकाओं में देश, समाज, संस्कृति, सभ्यता और श्रीरामानन्दसम्प्रदायोपयोगी संस्कृत, हिन्दी, गुजराती आदि भाषाओं में निबन्ध लिखा करते थे, जिनका संग्रह 'स्वामी श्री भगवदाचार्य–लेखरत्न–मञ्जूषा' नामक ग्रन्थ में मुद्रित हो चुका है। 'तत्त्वदर्शी'' ऐसे विप्लवकारी पत्र का अनेक वर्षों तक सम्पादन करके श्री रामानन्द– सम्प्रदाय का सर्वाङ्गीण उत्थान करते हुए सम्प्रदाय के अन्दर युगान्तर का दृश्य समुपस्थित कर दिया।

साम्प्रदायिक ग्रन्थों की रचना में और 'तत्त्वदर्शी' के सम्पादन में पू० स्वामीजी ने अपनी नवीनतम तथा हितप्रद शैली

का आश्रय लिया है। किसी के पीछे अन्धे होकर चलना स्वामीजी को कत्तई पसन्द नहीं।

ऐसे ही सर्वतन्त्रस्वतन्त्र वृत्तिवाले महापुरुष को लक्ष्य करके दूरदर्शी श्रीउदयनाचार्य ने क्या ही सुन्दर लिखा है—

"वयमिह पदविद्यां तर्कमान्वीक्षिकीं वा,
यदि पथि विपथे वा वर्तयामः स पन्थाः।
उदयति दिशि यस्यां भानुमान् सैव पूर्वा,
नहि तरणिरुदीते दिक् पराधीनवृत्तिः।"

इसी भाव को किसी हिन्दी के कवि ने दूसरे शब्दों में व्यक्त किया है—

'लीक-लीक गाड़ी चले, लीकै चलें कपूत,
लीक छोड़ि तीनहिं चलें, शायर, सिंह, सपूत।

राष्ट्रीय आन्दोलन के साथ ही राष्ट्रपिता महात्मा गान्धीजी ने हिन्दुधर्म, हिन्दुसंस्कृति और भारतीय राष्ट्र को सबल बनाने की पवित्र अभिलाषा से हरिजनोत्थान का आन्दोलन भी आरम्भ किया था। तात्कालिक नामधारी सनातन धर्मियों ने और धर्मध्वजियों ने उस आन्दोलन के विरुद्ध अदूरदर्शितापूर्ण आन्दोलन छेड़ रखा था। किन्तु श्रीरामानन्दसम्प्रदाय के पूर्वाचार्यों की सनातन

पद्धति के अनुसार स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज ने हरिजनोत्थान–आन्दोलन का महती निर्भीकता के साथ हार्दिक समर्थन 'अन्त्यजस्पर्श' आदि पुस्तक और पत्र–पत्रिकाओं में निबन्ध लिखकर किया। फलतः हरिजनों को भी भारत में मानवोचित अधिकार मिले और 'रघुपति राघव राजाराम, पतितपावन सीताराम' का यथार्थ स्वरूप चरितार्थ हुआ। इस हरिजनोत्थान–आन्दोलन के समर्थक होने के कारण स्वामीजी को अनेक सनातनी पण्डितों का कोपभाजन बनना पड़ा और शास्त्रार्थ के लिए ललकारों का दृढ़तापूर्वक सामना करना पड़ा, जिसका दिग्दर्शन तात्कालिक 'लोकधर्म' और 'तत्त्वदर्शी' आदि ग्रन्थों की पुरानी फाइलों से किया जा सकता है। स्वामीजी किसी भी विरोध तथा कोप की चिन्ता किये बिना अपने पूर्वाचार्यों द्वारा अनुमोदित मार्ग पर प्रगल्भता के साथ चलते रहे।

श्रीवैष्णवधर्म के परमाचार्य श्रीरामानन्द स्वामीजी के दिव्य सन्देश को विश्व के कोने–कोने में पहुंचाने की अभिलाषा से पूज्य स्वामीजी ने विदेश की यात्रा भी की। किन्तु 'श्रेयांसि बहुविघ्नानि।'' पासपोर्ट प्राप्त करने के बाद ही स्वामीजी बम्बई में सहसा अस्वस्थ हो गए। विश्व की यात्रा रुक गई। स्वस्थ होने पर

स्वामीजी ने पुनः यात्रा प्रारम्भ की और दक्षिण–पूर्व अफ्रीका गए। वहीं हिन्दुधर्म, विशेषकर श्रीवैष्णव धर्म तथा आर्य संस्कृति का सुन्दर प्रचार किया। आपके उपदेशों का संकलन और मुद्रण भी हुआ, जो गुजराती और हिन्दी में उपलब्ध है। वृद्धावस्था के कारण शेष संसार की यात्रा स्वामीजी न कर सके और अफ्रीका से भारत लौट आये।

प्रारम्भ में अयोध्यावास करते हुए स्वामीजी ने ईसाई मुसलमानों के साथ अनेक शास्त्रार्थों में विजय प्राप्त किया था। अर्बुदाचल (माउन्ट आबू) की चम्पागुफा में निवास करते समय जैनों, शैवों, स्मार्तो के साथ शास्त्रार्थों में विजय प्राप्त कर श्री रामानन्दसम्प्रदाय को अत्यधिक गौरवान्वित करने में स्वामीजी को महती सफलता मिली। जोधपुर राजस्थान में स्वर्गीय चित्रकूटी महान्त मुकुटमणि श्री रघुबीरदासजी महाराज के सविनय अनुरोध से ज्वराक्रान्त होते हुए भी भगवत्प्रतिमापूजन विषय पर आर्यसमाजी के साथ शास्त्रार्थ करने को गए और आर्यसमाजी पण्डित को शास्त्रार्थ के मैदान से पलायन करने को स्वामी जी ने विवश कर दिया। सत्यार्थप्रकाश में स्वामी श्रीदयानन्द सरस्वती द्वारा प्रतिमापूजन के विरुद्ध कुतर्कों का भीषण खण्डन करके

मूर्तिपूजन की उपादेयता को अच्छी तरह सिद्ध करके स्वामीजी ने मूर्तिपूजको का और आर्य संस्कृति का अनुपम उपकार किया है।

गीताभाष्य, दशोपनिषदों का भाष्य, ब्रह्मसूत्रों पर वैदिक भाष्य तथा श्री रामानन्दभाष्य आदि में स्वामी जी ने अपने प्रकाण्ड पाण्डित्य का अनुपम परिचय दिया है। किन्तु अन्धानुकरण करने वालों को इसकी महत्ता का पता नहीं लग सकता। स्वतन्त्र विचारकों के लिए यह बड़े लाभ की वस्तु है।

स्वामी जी की पवित्र प्रेरणा से भारत के विभिन्न स्थानों में श्री रामानन्द मन्दिर बने और बन रहे हैं। श्री रामानन्द जयन्ती महोत्सव भी समस्त भारत में होने लग गए हैं। आचार्य–गौरव, स्वधर्म–निष्ठा, विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त का उत्तर भारत में प्रचरित होना, यह सब स्वामी जी की देन है।

स्वामीजी का प्रत्युत्पन्नमतित्व–एक बार प्रयाग कुम्भ के अवसर पर नासिक पंचवटी (महाराष्ट्र) के पं.स्वामी श्री सीताराम दासजी महाराज (स्वर्गीय) की अध्यक्षता में षडदर्शन सम्मेलन हो रहा था। जनगणना में विरक्त साधु–सन्तों और संन्यासियों को अपना पेशा क्या लिखाना चाहिए, इस विषय पर एक प्रस्ताव शक्खर शिकारपुर–सिन्धु वेला के महन्त श्री हरिनामदास जी का

था । सम्मेलन में उपस्थित सभी सम्प्रदायों और धर्मों के विद्वान् सन्त–महान्तों द्वारा वह प्रस्ताव अनुमोदित तथा समर्थित हो चुका था। तब अध्यक्ष महोदय ने कहा कि 'यदि किसी महानुभाव को कोई आपत्ति न हो तो यह प्रस्ताव पारित समझा जावेगा।' इसपर पं. स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज ने दृढ स्वर में कहा, कि 'हां, मुझे इसके पारित होने में आपत्ति है' और इस प्रस्ताव की प्रति लेकर स्वामीजी वक्ता– मंच पर आए और कहा– 'उपस्थित विरक्त (संन्यासी) सन्त–महान्त विद्वज्जनों से मैं पूछता हूँ कि विरक्तता की दीक्षा लेकर–संन्यासी होकर पेशा (व्यवसाय) करने का क्या औचित्य है? भगवद्भक्ति या ब्रह्मोपासना करना क्या पेशा है? यदि नहीं, तो इस प्रस्ताव की आवश्यकता ही क्या है।'' इसका उचित उत्तर किसी से भी न हो सका और वह प्रस्ताव गिर गया। और उपस्थित विद्वत् समाज चकित होकर स्तब्ध हो गया।

नागरीप्रचारिणी सभा की स्वर्ण जयन्ती काशी में हो रही थी। भारत के विभिन्न विषयों के विद्वान् लोग भाषण देने के लिए आए हुए थे। महामहोपाध्याय पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदीजी का सनातन धर्म की महत्ता पर ओजस्वी भाषण हुआ और उनके

पश्चात् ही स्वामी श्री भगवदाचार्यजी महाराज का भाषण प्रारम्भ हुआ। हरिजनोद्धार–आन्दोलन के समय स्वामीजी के हरिजनोत्थान–उद्धार सम्बन्धी विचारों के विरुद्ध चतुर्वेदीजी ने आलोचना की थी। अतः चतुर्वेदीजी के पाण्डित्यपूर्ण भाषण की शव परीक्षा स्वामी जी ने ऐसे ढंग से प्रारम्भ की कि विद्वान् श्रोतागण विमुग्ध हो गए और कई विद्वानों ने अपना–अपना सारा समय स्वामी जी के लिए अर्पित कर दिया। स्वामी जी ने प्रचलित सनातनधर्म के दूषणों का दिग्दर्शन कराते हुए चतुर्वेदी जी के भाषण को पाखण्ड पूर्ण सिद्ध कर दिया और बेचारे चतुर्वेदी जी सभा छोड़कर चुपके से प्रस्थित हो गए।

स्वामी जी के नेतृत्व में श्री रामानन्द सम्प्रदाय के अन्दर क्रान्ति की लहर भारत की दसों दिशाओं में फैल गई। इससे श्री वैष्णवसमाज को अनेक लाभ हुए। निज आचार्य–निष्ठा, उपास्यदेव के प्रति अनन्य श्रद्धा–भक्ति और अपने संस्कारों–संस्कृतियों में परिपूर्ण आस्था उत्पन्न हुई। धर्मग्रन्थों का प्रचार, अनन्य धर्म–निष्ठा की भावना का उदय और परमुखापेक्षिता का दूरीकरण हुआ। विभिन्न स्थानों पर शिक्षण – संस्थायें बनीं तथा सम्प्रदाय में अनेक विद्वान् पैदा हुए।

गुरुपरम्परा—युद्ध के मध्यकाल में ही स्वामी जी अयोध्या छोड़कर अहमदाबाद, बड़ोदा और आबूराज में रहते हुए श्री रामानन्दसम्प्रदाय की सेवा में लगे रहे। सम्प्रदाय पर आए हुए संकट का समाचार सुनकर भारत के विभिन्न भागों में पहुंचकर स्वामीजी ने सम्प्रदाय तथा साम्प्रदायिकों की रक्षा करते हुए श्री वैष्णवधर्म के विजयध्वज को सदैव ऊंचा रखने का प्रयत्न प्राणपण से किया है और आज भी कर रहे हैं।

अविभाजित भारत में ही मुलतान, पंजाब, गुजरात और सौराष्ट्र आदि में बड़े—बड़े वैभवशाली मठों का अध्यक्षपद प्रदान का प्रस्ताव स्वामी जी के पास आया करता था, किन्तु स्वामी जी ऐसे पद को सदा अस्वीकृत करते रहे। आप सदैव सरस्वती की उपासना तथा निज यशःशरीर के सम्वर्द्धन—पोषण में संलग्न रहते आये हैं। स्वामी जी अपने विरोधियों के अतीव क्षुद्रतापूर्ण व्यवहारों की उपेक्षा करते हुए श्रीसम्प्रदाय के हितों का चिन्तन करते हुए 'कुंजर चले बाजार कुकुर भूके हजार'' का आदर्श समक्ष में रखकर गन्तव्य पथ पर दृढ़ता के साथ प्रयाण करते रहे हैं। सत्पथ पर प्रयाणकाल में आपने भर्तृहरि के निम्नांकित सूक्ति को सदैव दृष्टि पथ में रखा। यथा—

"निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु,
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः॥

स्वामी जी ने सम्प्रदाय–हित को सर्वोपरि समझकर अपने सभी प्रकार के स्वार्थों का परित्याग करके विविध कष्टों को सुखपूर्वक सहते हुए श्रीरामानन्दसम्प्रदाय के नैसर्गिक गौरव को बढ़ाने में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। श्रीरामानन्दसम्प्रदाय की ही नहीं, प्रत्युत चतुःसम्प्रदाय को चिरकाल की परतन्त्रता को मिटाकर उन्मुक्त वायुमण्डल में विचरने का शुभ अवसर प्रदान करने की असीम क्षमता स्वामीजी में मौजूद है। समय–समय पर विपक्षियों को परास्त करके श्रीवैष्णव धर्म के उत्तुङ्ग गौरव की रक्षा स्वामीजी ने की है और आज भी कर रहे है।

इन अनन्त उपकारों से उपकृत होकर समय–समय पर चतुःसम्प्रदाय के खालसावालों ने, सभी अखाड़े– अनियों के नागा–अतीत–सन्त–महान्तों ने अखिल भारतवर्ष के महान्त–मठाधीशों ने, वैष्णव विद्वानों तथा छात्रों ने, पाठशाला, विद्यालय एवं महाविद्यालय के अध्यापकों, प्राध्यापकों प्राचार्यों और

विद्यार्थी लोगों ने अनेक अभिनन्दन–पत्रों, सम्मान–पत्रों व स्वागत–पत्रों द्वारा स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज का अभूतपूर्व आचार्योचित सम्मान किया है। यदि उन अभिनन्दन–सम्मान–पत्रों का संकलन हो तो एक विशालकाय ग्रन्थ बन सकता है।

श्रीवैष्णव–निष्ठ सन्त महान्त और विवेकशील विद्वान् लोगों ने स्वामीजी महाराज को द्वितीय स्वामी श्रीरामानन्दाचार्य एवं श्रीवैष्णवाचार्य मान रखा है। अतएव यत्र–तत्र धर्माचार्यों के सम्मेलनों में श्रीरामानन्दपीठाधीश्वर के सर्वोच्च पद पर स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज को ही प्रतिष्ठित किया जाता रहा है।

काशी की पण्डितसभा ने पूज्य स्वामी जी के प्रकाण्ड पाण्डित्य से प्रभावित होकर 'पण्डितराज' और 'सारस्वतसार्वभौम' की उपाधियों से स्वामीजी को सम्मानित किया है।

भारत के विभिन्न भागों के कृतज्ञ वैष्णव सन्त, महान्त, भक्तजनों ने पूज्य स्वामी जी के अनन्त उपकारों को दृष्टिपथ में रखकर अयोध्या में 'स्वामी श्रीभगवदाचार्य स्मारक सदन' बनवाकर उसमें स्वामी जी की भव्य प्रतिमा प्रतिष्ठित की है और

धार्मिक सभा सम्मेलन करने के लिए अनेक बिजली के पंखों से युक्त विशाल प्रवचन भवन (हॉल) का भी निर्माण कराया गया है। इसके साथ ही अतिथिशाला, पाठशाला, दातव्य औषधालय, पुस्तकालय,वाचनालय,विद्यालय, श्रीरामलीलामण्डप, शौचालय और स्नानागर आदि का भी निर्माण कराया गया है।

यद्यपि स्वामी जी ने राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग नहीं लिया है तथापि आपके कार्य राष्ट्रीयता के परम पोषक हुआ करते हैं। प्रथम विश्वमहायुद्ध के पूर्व से ही भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध विविध प्रकार के आन्दोलन चला करते थे। यत्र–तत्र आतङ्कवादियों का आन्दोलन भी चला करता था और पुस्तकों, पत्र पत्रिकाओं द्वारा भी ब्रिटिश साम्राज्य की जड़ को उखाड़ फेंकने के लिए प्रयत्न चल रहे थे। ऐसे कार्य का एक केन्द्र भरतपुर (राजस्थान) में भी था, जिसके संचालक भरतपुर के स्वर्गीय महाराज के साथ ही दिवंगत स्वामी श्रीजगन्नाथदासजी अधिकारी जी भी थे, जो स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज के विश्वस्त मित्र थे। ऐसे कार्यकर्ताओं को स्वामीजी निरन्तर प्रोत्साहन दिया करते थे। राष्ट्रीय आन्दोलन के समय से ही स्वामीजी विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और स्वदेशी वस्तुओं के

प्रचार के प्रबलतम समर्थक रहे हैं। यही कारण है कि आरम्भ से भी स्वामी जी खादी पहिना करते है। महात्मा गान्धीजी के असह –योग आन्दोलन के समय विदेशी वस्तुओं के, विद्यालयों, महाविद्यालयों और विदेशी शासन के अधीन चलने वाली शिक्षणसंस्थाओं की दी हुई उपाधियों के बहिष्कार का भी आन्दोलन चला था। स्वामी जी ने ऐसी शिक्षण–संस्थाओं की परीक्षाओं के साथ ही वेदतीर्थ आदि उपाधियों को त्याग दिया। प्रमाण–पत्रों की भी होली जला दी।

स्वामीजी में स्वदेशभक्ति, स्वराष्ट्र गौरव, भारतीयता का अभिमान कूट–कूट कर भरा हुआ है। राष्ट्रीय नेताओं के प्रति भी आदर भाव है तथा राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी के प्रति असीम श्रद्धा है। अतएव स्वामी जी ने महात्मा जी के व्रतविचार का संस्कृत पद्यमय अनुवाद किया है। सन् 1926 ई० से महात्मा गाँधी के महाप्रयाणपर्यन्त स्वामी जी ने तीन महाकाव्यों – भारतपारिजात, पारिजातापहार तथा पारिजातसौरभ की रचना की है। पारिजातापहार का सृजन प्रायः अनुष्टुप छन्दो में हुआ है। स्वामीजी के ग्रन्थों तथा महाकाव्यों के पाठकों ने स्वामीजी से सानुनय अनुरोध किया कि 'आप कृपया इसे ज्ञेय छन्दों में बदल

देते तो साहित्यप्रेमी जनों का महान उपकार होता। स्वामीजी ने इस अनुरोध पर पारिजातापहार को अत्यल्प समय में गेय छन्दों में लिखकर सत्वर प्रकाशित करा दिया । इन महाकाव्यों को लिख कर स्वामीजी ने निजी गौरवपूर्ण उत्कर्ष को बढ़ाते हुए, अपनी कमनीय कीर्ति को अमर करते हुए श्रीरामानन्दसम्प्रदाय को भी चरमोत्कर्षता प्रदान कर दी है। स्वामीजी को दीर्घसूत्रीत्व कभी स्पर्श न कर सका और उनमें ग्रन्थ लिखने, कार्य करने एवं काव्यों के लिखने की प्रतिभा का असीम प्राचुर्य है। स्वामीजी में कर्तुमकर्तुम् अन्यथा कर्त्तुम् की अपार क्षमता सदैव विद्यमान रहा करती है। आपके महाकाव्यों में यथास्थान नवरसों का ऐसा सुन्दर प्रयोग हुआ है कि उनके पढ़ने वाले सहजता सरलता से तल्लीन हो जाया करते है। वीर, रौद्र, श्रृङ्गार, शान्त तथा करुण रस के तो स्वामीजी अवतार ही है। उनके सम्पर्क में रहनेवाले, प्रवचनों के श्रोतागण तथा उनसे वार्तालाप करनेवाले सौभाग्यशाली जन इसे अच्छी तरह से जानते हैं। आरम्भ में (सन् 1920 में) इन स्वभावों के कारण स्वामीजी को अयोध्यावासियों के मुखों से यह कहते हुए मैनें सुना था—'स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज देवों के गुरु बृहस्पति के अवतार है। कोई कहता था, नहीं, स्वामीजी वीर

लक्ष्मण जी के अवतार हैं। अधिकांश लोग कहा करते थे कि स्वामीजी साक्षात् भगवान राम के ही अवतार हैं और अपने प्रिय श्रीरामानन्द सम्प्रदायका उद्धार करने के लिए ही अवनीतल पर फिर अवतरित हुए हैं। ऐसे महान् शिष्य को पाकर बड़ा स्थान अयोध्या के आचार्य बड़े भाग्यशाली है।' इत्यादि 'जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति देखी तिन तैसी' सर्वत्र चरितार्थ हो रहा था।

स्वामीजी की अनुपम प्रतिभा, प्रकाण्ड प्राण्डित्य, असीम उत्कर्ष, भारतवर्ष के चारों ओर से मिले हुए अभूतपूर्व सम्मानों–आदरों–प्रतिष्ठानों को देखकर कतिपय स्वामीजी के अनुचर और सहयोगी भीषण ईर्ष्यालु हो उठे। किन्तु ऐसे वामनों को सम्मानित पदों की प्राप्ति न हो सकी।

श्रीमते रामानन्दाय नमः

श्रीसम्प्रदायरक्षा.

पण्डितराज सारस्वतसार्वभौम श्रीसम्प्रदाय के समुन्नायक जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य स्वामी भगवदाचार्य विरचित–

अमेयमहिमानं तं रामनामानमद्भुतम्।
अक्षय्यसुखधामानं भूमानमहमाश्रये।।1।
राममन्त्रप्रदातारं भवबन्धविमुक्तये।
प्रणमामि प्रसादान्तं गुरुं राममनोहरम्।।
नत्वा तत्वाभिधातारं विद्याचार्यं महामतिम्।।
श्री सम्प्रदायरक्षेयं क्रियते ब्रह्मचारिणा।।
सीतानाथसमारम्भां रामानन्दार्य्यमध्यमाम्।
अस्मदाचार्य्यपर्य्यन्तां वन्दे गुरुपरम्पराम्।।

श्रीसम्प्रदायदिक्प्रदर्शन में पद्य संख्या की तरह गद्य संख्या लिखी हुई है। सब मिलकर 45 संख्या है। इस पुस्तक में केवल श्रीरामानन्दसम्प्रदाय और श्रीरामानुजसम्प्रदाय का ऐक्य सिद्ध

करने का व्यर्थ प्रयास किया गया है । पुस्तक के नाम का पुस्तक के विषय के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। जिन हेत्वाभासों से श्रीरामानन्दसम्प्रदाय और श्रीरामानुजसम्प्रदाय का एकीकरण किया गया है उनका स्पष्टीकरण आगे करूंगा। यहां पर यह बात श्रीमहाराजजी से पूछ लेना चाहता हूं कि यह अभेदवाद आप केवल श्रीरामानन्दीय वैष्णवों से ही स्वीकार कराना चाहते हैं अथवा श्रीरामानुजीय लोगों से भी? क्या रामानुज स्वामी की गद्दी का कोई भी आचार्य अपने को श्रीरामानन्दीय वैष्णव स्वीकार कर लेगा? यदि नहीं तो श्रीरामानन्दीय वैष्णव ही ऐसा करने के लिये क्यों बाध्य किये जाते हैं? क्या इस ऐन्द्रजालिक अभेद का यही अर्थ है कि श्रीरामानन्दीय वैष्णव जिस किसी को गुरु मानकर साष्टांग करते फिरें? क्या आप यही चाहते हैं कि श्रीरामानन्दीय वैष्णव पन्थाई बनकर संसार में अपमान के साथ जीवन व्यतीत करें? महाराजजी! यदि आप यही चाहते हों तो विश्वास रखिये कि यह आपका मनो विलास मनोविलास मात्र रहेगा।आज श्रीरामानन्दसम्प्रदाय जागृत हो गया है। अनन्तकाल की निद्रा का नाश हो गया है। ज्ञान तथा विचार का प्रभाकर अपनी सम्पूर्ण कला से देदीप्यमान है। अतः बुद्धिमान्, विवेकी

और धर्मनिष्ठ आस्तिक श्रीरामानन्दीय अब पुनः गड्ढे में नहीं गिरेंगे।

"–श्रीरामानन्दसम्प्रदाय का श्रीरामानुज सम्प्रदाय से सर्वथा अभेद है।"

श्रीमहाराजजी की यह प्रतिज्ञा है। इसकी पूर्ति में पहले प्रधानतया 20 हेतु दिये गये हैं।

वह यह हैं–

(1) श्रीरामानन्दसम्प्रदाय में तत्व, आचार, व्यवहार और प्रायश्चित्त की व्यवस्था श्रीरामानुजसम्प्रदाय के सदृश ही अङ्गीकार की गई है।

(2) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में श्री रामानुजसम्प्रदाय के सदृश ही तत्त्वत्रय स्वीकार किया गया है।

(3) दोनों सम्प्रदाय में समान रूप से श्रीराम और नारायण का अभेद स्वीकार किया गया है।

(4) दोनों सम्प्रदायों में श्वेतमृत्तिका से ऊर्ध्वपुण्ड्र का धारण करना समान है।

(5) तुलसीमाला धारण दोनों सम्प्रदायों में समान है।

(6) दोनों सम्प्रदायों में दासान्त नाम का समान व्यवहार है।

(7) दोनों सम्प्रदायों में भक्ति के स्वरूप की समानता है।

(8) दोनों सम्प्रदायों में एकादशी व्रत का समान व्यवहार है।

(9) दोनों सम्प्रदायो में सिंह की संक्रान्ति में श्री कृष्णजयन्ती का समान आचार है।

(10) दोनों सम्प्रदायों में श्रीजी की अणुरूप से व्याप्तिका स्वीकार है।

(11) दोनों सम्प्रदायों में प्रभु की प्राप्ति में श्रीजीका पुरुषकार मानना समान है ।

(12) दोनों सम्प्रदायों में वात्सल्य का तात्पर्य दोषभोग्यत्व और दयाका का तात्पर्य परदु:खासहिष्णुता समान है।

(13) दोनों सम्प्रदायों में प्रपत्ति को समान रूप स्वीकार है।

(14) दोनों सम्पदायों में प्रपत्ति की हानि में तुल्य प्रायश्चित्त है।

(15) दोनों सम्प्रदायों में अणुपदार्थ में भगवान की अन्तर्व्याप्ति मानी गई है।

(16) दोनों सम्प्रदायोंमें विरज़ापार कैवल्य की स्थिति मानी गई है।

(17) दोनों सम्प्रदायों में प्रपन्नके आर्त और दृप्त दो भेद स्वीकार

किये गये हैं।

(18) दोनों सम्प्रदायों में प्रातःकाल उठकर स्वगुरु परम्परा का अनुसंधान और स्वगुरु के ध्यान के अनन्तर 'सत्सङ्गम्' और 'मुक्तोर्चिः' इन दोनों श्लोको ं का पाठ करना समान है।

(19) दोनों सम्प्रदायो ं में श्री भाष्य और द्रविड प्रबन्ध का पाठ करना समान है।

(20) दोनों सम्प्रदायों में दिव्य देश में भगवत्कैङ्कर्य करना अथवा यदवाद्रि (मैलकोटा) में नित्यवास करना समान है ।

इनमें से 19 वें और 20 वें हेतुओं का श्रीमदनन्ताचारी स्वामी के तत्त्वोद्‌बोधन नामक पुस्तक के खण्डन स्वरूप तत्त्वोद्वोधन मीमांसा में भली प्रकार खण्डन किया गया है। अतः यहां ग्रन्थ विस्तार की आवश्यकता नहीं है। शेष हेतुओं की क्रम से मीमांसा यहां करता हूं।

(1) यहां पर तत्त्व पद से श्रीमान् का क्या अभिप्राय है? तत्त्वत्रय अथवा अन्य कुछ? यदि तत्त्वत्रय ही विवक्षित हो तब तो नैयायिकों के यहां भी तत्वत्रय माना गया है। अतः स्मार्तादि

नैयायिकों के साथ भी श्रीरामानंदसम्प्रदाय एवं श्रीरामानुजसम्प्रदाय का ऐक्य क्यों नहीं स्वीकार करते? यदि कुछ दूसरा अर्थ विवक्षित हो तो उसे स्पष्ट करना चाहिये था? इस हेतु के खण्डन से द्वितीय हेतुका भी खण्डन समझ लेना चाहिये ।

(2) श्रीमान् के सिद्धान्तानुसार श्रीराम और नारायण में अभेद तो सब सम्प्रदाय के लोग स्वीकार करते हैं, अत: सबके साथ इन दोनों सम्प्रदायों का अभेद क्यों नहीं आप स्वीकार कर लेते?

(3) यद्यपि श्वेतमृत्तिका से ऊर्ध्वपुण्ड्र का धारण दोनों सम्प्रदायों में समान है परन्तु श्रीरामानन्दसम्प्रदायमें गोपीचन्दन का भी तो व्यवहार है। यदि श्रीरामानुजीय लोग भी इसे स्वीकार करें तो इन दोनों सम्प्रदायो का निम्बार्क सम्प्रदाय के साथ भी अभेद क्यों न श्रीमान् स्वीकार करें?

(4) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में तुलसीमाला धारण करना अतीव आवश्यक नहीं है किन्तु तुलसीकण्ठी परमावश्यक है । इसके बिना किसी का जल भी हमारे सम्प्रदायमें अग्राह्य है।

श्रीरामानुज सम्प्रदाय में कण्ठी तो सर्वथा निषिद्ध है। अतएव श्रीतोताद्रि स्वामी अयोध्याजी में आकर कितनों की कण्ठी का जलप्रवाह करा गये हैं । रह गई तुलसी की माला, वह भी उनके यहां नियत नहीं है। अतः समानता नहीं आई। यदि माला पद से कण्ठी का भी ग्रहण करें तो वल्लभ आदि सम्प्रदायों के साथ श्रीरामानन्द सम्प्रदाय का अभेद हो जायगा और श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के साथ श्रीरामानुज सम्प्रदाय का भेद स्वतः सिद्ध होकर श्रीमान् की मनःकल्पलतिका का विघातक होगा।

(5) दासान्तनाम का व्यवहार नियत रूप से समान नहीं है। हमारे यहां प्रसादान्त और शरणान्त नाम का भी व्यवहार है और उनके यहां नहीं। अतः इससे भी अभेद सिद्ध नहीं हो सकता।

(5) भक्तिस्वरूपकी एकता प्रायः बहुत सम्प्रदायों के साथ सिद्ध है तब तो सबके साथ ऐक्य स्वीकार करना चाहिए।

(6) यह भी बहुतों के साथ समान है। तथा श्रीरामानन्दसम्प्रदाय में कितने लोगो के मत से भेद भी है। अतः यह हेतु भी स्वार्थसाधक नहीं हुआ।

(7) यह भी अन्य सम्प्रदायों के साथ प्रायः तुल्य है। अतः यह हेतु भी ठीक नहीं।

(8) अणुरूप से श्रीजी की व्याप्ति श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में स्वीकृत नहीं है। ऐसा वाक्य हमारे सम्प्रदाय के ग्रन्थों में जहां 2 आवे सब प्रक्षिप्त समझना चाहिये । अतएव अहिर्बुध्न्य संहिता में लिखा है कि—

नित्या कालापरिच्छेदात्पूर्णाऽऽकारवियोगतः।
व्यापिनी देशविभ्रंशाद्रिक्ता, पूर्णा च सर्वदा ॥8॥
जगत्तया लक्ष्यमाणा सा लक्ष्मीरिति गीयते।
श्रयन्ती वैष्णवं भावं सा श्रीरिति निगद्यते ॥9॥

अर्थात् वह श्रीपदवाच्य जगत्त्रयजननी श्रीजानकीजी काल से अपरिच्छिन्न होने के कारण नित्या हैं, देह—आकार को परिवर्तन न होने के कारण पूर्णा हैं, व्यापिका है, किसी एक स्थान को छोड़कर दूसरे स्थानमें जाने आने आदि धर्मो से रिक्ता हैं, तथा सर्वदा परिपूर्ण हैं। यही सिद्धांत श्रीयुत वेदान्ताचारी स्वामीजी ने अपने न्याय सिद्धाञ्जन में स्थिर किया है।

(11) श्रीजी को प्रभुकी प्राप्ति में पुरुषकार मानना भी कोई विचित्र

बात नहीं है। प्रभु प्राप्ति में सब सम्प्रदायों में शक्ति स्वरूप श्री सीता राधा आदि की कारणता है। अतः इससे भी श्रीमान् का मनोरथ सफल नहीं हो सकता।

(12) वात्सल्य और दया का स्वरूप भी सबके यहां समान है। अतः यह भी अभेद प्रतिपादन नहीं कर सकता। अन्यथा सबके साथ अभेद हो जायगा।

(13,14,15,16) यह सब भी प्रायः सब सम्प्रदायों में तुल्य है अतः इससे भी दोनों सम्प्रदायों में अभेद सिद्ध नहीं हो सकता।

(17) प्रपन्नके दो ही भेद हैं यह कौन स्वीकार करता है। अनेक भेद इन दोनों सम्प्रदायों में तथा अन्य सम्प्रदायों में भी स्वीकृत हैं। अतः पूर्ववत् यह भी व्यर्थ हेतु है।

(18) गुरुपरम्परा का स्मरण करना भी सकल सम्प्रदाय सिद्ध है। अतः यह भी कोई असाधारण हेतु नहीं है। रह गई बात 'सत्सङ्गात्' और 'मुक्तोर्चिः' इन दोनों श्लोकों की, सो तो श्रीरामार्चन पद्धति के खण्डन से खण्डित हो गई। इसका खण्डन आगे देखिये।

(20) दिव्य देश में वास करना केवल नारायण उपासकों के लिये

है। श्रीरामोपासकों के लिये नहीं, उनके लिये तो श्री अयोध्या और चित्रकूट ही परम स्थान है, अतएव श्री. वै. मताब्जभास्कर में लिखा है कि—

'शालग्राममममोघ दिव्यफलदं दैवं हरिक्षेत्रकेऽ
योध्यायां रघुपुङ्गवं गुणनिधिं श्रीरामचन्द्रं प्रभुम्॥'

अर्थात् रघुवंश विभूषण भगवान् श्रीरामजी को स्मरण करता हुआ श्री अयोध्या में निवास करे। आगे चलकर पुन: लिखा है कि—

'गंगासागरसङ्गमेऽति शुभदे विष्णुं, तथा राघवं,
शश्वद्भूरिगुणालयं मुनिवृते श्रीचित्रकूटे विभुम्॥'

अर्थात् मुनिसेवित चित्रकूट में अनन्त गुणगणालय भगवान् रामचन्द्र का स्मरण पूजन करता हुआ बास करे। इसके पश्चात् लिखा है कि—

'नारायणं श्रीमति यादवाद्रौ'

अर्थात् नारायण का स्मरण करता हुआ यादवाद्रि में निवास करे। इससे स्पष्ट प्रतीत हो रहा है कि श्रीरामोपासकों के लिये श्रीरामानुज सम्प्रदायका दिव्य देश नहीं है।

भेदनिदर्शन.

हमारे श्री महाराजजी ने दोनों सम्प्रदायों में अभेद सिद्ध करने के लिये जिन हेतुओ का उपन्यास किया है उनका खण्डन ऊपर किया जा चुका। अब मैं ऐसी युक्तियों से दोनों सम्प्रदायों का भेद सिद्ध करूंगा जो सर्वथा अकाट्य होंगी।

(1) श्रीरामानंद सम्प्रदाय और श्री रामानुजसम्प्रदाय का प्रायः सब आचार व्यवहार भिन्न है।

(2) श्रीरामानन्दसम्प्रदाय में कथंचित् श्रीराम और श्रीनारायण में अभेद होने पर भी श्रीराम का ही परत्व मान्य है। और उनके यहां श्रीनारायण का परत्व मान्य है।

(3) श्रीरामानंद संप्रदाय में सम्पूर्ण भगवन्मन्त्रों में समभाव रहते हुये भी श्रीराम मन्त्र सर्वोत्कृष्ट है। उनके यहां श्रीराम मन्त्र, कृष्णमन्त्र इत्यादि व्यर्थ और तुच्छ हैं।

(4) श्री रामानन्द सम्प्रदाय में किसी मन्त्र की निन्दा नहीं की गई है। उनके सम्प्रदाय में श्रीराममन्त्रादि अपराधी और निन्दनीय है। इसका विशेष विवरण रहस्योद्घाटन में देखिये।

(5) श्रीरामानन्दसम्प्रदायमें ऋग, यजुः, साम और अथर्व आदि ही

वेद माने जाते हैं और उनके यहां द्रविड प्रबन्ध भी।

(6) श्रीरामानन्दसम्प्रदाय में तुलसी की कण्ठी परमावश्यक है, उसका सतत धारण करना ही धर्म है, उसके बिना किसी का जलतकभी ग्राह्य नहीं है। परन्तु उनके सम्प्रदाय में यह सब कुछ नहीं है ।

(7) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में प्रसादान्त और शरणान्त नाम का व्यवहार है उनके यहां प्रसादान्त और शरणान्त का व्यवहार नहीं है।

(8) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के वैष्णव श्री रामानुज सम्प्रदाय के ब्राह्मणों का पक्व अन्न ग्रहण करते हैं किन्तु वे लोग हमारे सम्प्रदाय के सन्तों का अन्न नहीं ग्रहण करते।

(9) श्रीरामानन्द सम्प्रदायमें किसी भी व्रत में रात दिन उपवास करते हैं परन्तु उनके यहां रामनवमी, कृष्ण– अष्टमी इत्यादि पुण्य दिनों में जन्म के बाद पारणा का व्यवहार है।

(10) हमारे यहाँ श्रीसम्प्रदाय का ही दूसरा नाम श्री रामानन्दसम्प्रदाय है और उनके यहां नहीं।

(11) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में भक्ति के अधिकारी मनुष्य मात्र हैं

परन्तु उनके यहां वेदादि शास्त्र पढा हुआ द्विजमात्र।

(12) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में दीक्षासंस्कार के अनन्तर रहस्य—त्रयका उपदेश होता है और श्री रामानुज सम्प्रदाय में नहीं।

(13) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में भगवत्पूजा अर्चा में शङ्ख का प्रयोग होता है परन्तु रामानुज सम्प्रदाय में वह अस्पृश्य माना जाता है।

(14) श्री रामानन्द सम्प्रदाय में शालग्राम के साथ गोमती चक्र रखने का विधान है, रामानुज सम्प्रदाय में नहीं।

(15) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में पञ्चसंस्कार अनादि काल से होता आ रहा है, परन्तु रामानुज संप्रदाय में नहीं।

(16) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में सर्वत्र सदा भोजन सम्बन्धी आचार का यथोचित विचार रहता है परन्तु श्री रामानुज सम्प्रदाय में दिव्यदेशआदि में स्पर्श आदि दोष नहीं माना जाता।

(17) श्रीरामानन्दसम्प्रदाय में श्री हनुमान जी पूज्य देव माने जाते हैं। उनका प्रसाद ग्रहण किया जाता है। श्रीरामानुज सम्प्रदाय

में नहीं।

(18) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय का सिद्धान्त है, कि श्रीरामजी ने श्रीराममन्त्र का उपदेश श्री जानकीजी को दिया और उन्होंने श्रीहनुमानजी को दिया इस प्रकार राममन्त्र का भूतल पर प्रचार प्रसार हुआ। श्रीरामप्रसादाचार्यजी महाराज ने इसी परम्परा का निरूपण किया है, यही बात श्रीरघुनाथप्रसादार्चजी महाराज मानते थे, यही बात श्री चरणजी आज से कुछ दिन पहले मानते थे, (परन्तु अब कौन पूछता है श्रीरामको और कौन पूछता है श्रीरामप्रसादचार्यजी महाराजको! अब तो बडी जगह में चतुर्भुज नारायण की धूमधाम है। भगवान् करेंगे तो नारायण की लाल श्रीजी भी पधारेंगी)। श्रीरामानुज सम्प्रदाय में इसका गन्ध भी नहीं है।

(19) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में आरती के समय पूजा का जल अर्घे से बाहर फेंका जाता है, श्री रामानुज सम्प्रदाय में नहीं।

(20) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में आरती की स्तुतियों के साथ उनकी

स्तुतियो का कोई सम्बन्ध नहीं है।

(21) श्रीरामानन्दसम्प्रदाय में रक्तश्री, शुक्लश्री (लश्करी) गोलश्री (बिन्दु) लुप्तश्री (चतुर्भुजी) इत्यादि अनेक भेद हैं श्री रामानुज सम्प्रदाय में यह सब भेद नहीं हैं।

(22) श्री रामानन्द सम्प्रदाय में, काठिया, मुंजिया, खाकी, तपसी, जटाधारी, पञ्चकेशी इत्यादि अनेक भेद हैं, श्रीरामानुजसम्प्रदाय में नहीं।

(23) श्री रामानन्द सम्प्रदाय के विरक्तों में ब्रह्मचर्य और संयास दो आश्रम माने जाते हैं परन्तु श्रीरामानुज सम्प्रदाय के विरक्तों का पांचवां आश्रम है।

(24) श्री रामानन्द सम्प्रदाय में श्री राम लक्ष्मण और जानकीजी की प्रतिमा मन्दिरों में पधराई जाती है। और श्री रामानुज सम्प्रदाय में नारायण की प्रतिमा पधराई जाती है।

(25) श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में चतुः सम्प्रदाय के भगवमन्दिरों में जाकर भगवान् को साष्टाङ्ग दण्डवत् करने की प्रथा है परन्तु श्रीरामानुज सम्प्रदाय में नहीं।

इस प्रकार अनेक भेदों के रहते हुये क्षणभङ्गुर हेतुओं से अभेद सिद्ध करना बड़े साहस का कार्य है। श्रीमहाराजजी! मैं यह भी पूछ लेना चाहता हूं कि आप जिस प्रकार से अनेक भेदों के रहते हुये भी यत्किञ्चिद्धर्म की समानता के कारण दोनों सम्प्रदायों में अभेद सिद्ध करते हैं उसी प्रकारसे अनेक धर्मों के भेद होने से दोनों में भेद ही क्यों नहीं स्वीकार करते? तथा आपकी रीति से तो ब्राह्मण और क्षत्रिय आदि का भी परस्पर अभेद सिद्ध हो जायगा, क्योंकि (1) मातापिता से उत्पत्ति, (2) दुग्धपान, (3) नवमास पर्यन्त गर्भवास, (4) मांसादि भक्षण, (5) मांसादि परित्याग, (6) दक्षिण में मामा की लड़की से विवाह (7) सोलह संस्कार, (8) दोनों के वेदाधिकार, (8) दोनों का द्विजत्व इत्यादि अनेक बातो में समता आगोपाल प्रसिद्ध है।

ऊर्ध्वपुण्ड्र चारों सम्प्रदायों में विहित होने के कारण चारों सम्प्रदायों का अभेद सिद्ध हो जायगा, निम्बार्क सम्प्रदाय के ऊर्ध्वपुण्ड्र, मध्यबिन्दु और गोपीचन्दन धारण के साथ समानता होने से समस्त बेंदीवाले श्रीवैष्णवों का निम्बार्क सम्प्रदाय के साथ

अभेद हो जायगा। अतः इस प्रकार की समानता से अभेद सिद्ध करने का प्रयास सर्वथा व्यर्थ है। अब हम यहां पर संक्षेप से यह बताना चाहते हैं कि जो थोड़ा सा सिद्धांत में अभेद हमारे सम्प्रदाय का श्रीरामानुज सम्प्रदाय के साथ है उसका ऐतिहासिक और वास्तविक कारण क्या है।

सृष्टि के आरम्भ में केवल वैष्णव धर्म था । मानव जाति का यही एक अवलम्ब था। जैसा कि वेद में लिखा है। 'यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।'

यज्ञों के द्वारा यज्ञ अर्थात् विष्णु का (यज्ञो वै विष्णुरिति श्रुतिः) देवताओं ने पूजन किया। यही विष्णु पूजन रूप धर्म प्राथमिक धर्म था। उस समय के वैष्णव धर्म में केवल श्रीरामजी की उपासना प्रचलित थी अतएव सत्‌युग का प्रसिद्ध प्रह्लादभक्त श्रीरामोपासक थे। उस धर्म का दूसरा नाम 'श्रीसम्प्रदाय भी है। उस समय श्री सम्प्रदाय में केवल श्रीराममन्त्र की परम्परा चल रही थी। अनेक ऋषि और महर्षि श्रीराममन्त्र के प्रचारक थे। जैसा कि श्रीमद्वाल्मीकि संहिता के मैथिली उपनिषद् में लिखा है—

'इममेव मनुं पूर्व साकेतपतिर्मामवोचत्। अहं हनूमते मम प्रियाय प्रियतराय। स वेदवेदिने ब्रह्मणे। स वसिष्ठाय। स पराशराय। स व्यासाय। स शुकाय। अर्थात् श्री सीताजी कहती हैं कि इस राममन्त्र का श्रीरामजी ने सर्वप्रथम मुझे उपदेश दिया। मैंने अपने प्रिय शिष्य हनुमान को। हनुमान ने ब्रह्मा को। ब्रह्मा ने वसिष्ठ को। वसिष्ठ ने पराशर को। पराशर ने व्यास को। व्यास ने शुकदेव को, इत्यादि।

इसके पश्चात् कालचक्र परिवर्तित हो गया।' कलौ खलु भविष्यन्ति नारायणपरायणाः' इस वचनके अनुसार भगवान्नारायण के उपासकों का एक नूतन मत कलियुग के 43 दिन बीतने के बाद उत्पन्न हुआ। यह मत भक्ति का प्रचारक था। आदि पुरुष संस्कृत भाषा से अनभिज्ञ थे । परन्तु प्रतापी भी थे । उन्होंने द्रविड भाषा में भक्ति विषयक बहुत से निबन्ध लिखे, जो पीछे से द्रविडवेद के नाम से प्रसिद्ध हुये । पीछे से अनेक ब्राह्मण विद्वान भी इस भक्ति मार्ग में सम्मिलित हुये । उन्होंने श्रीराममन्त्र सम्बद्ध श्री सम्प्रदाय के सिद्धांतों का अपने में सङ्ग्रह करना

आरम्भ किया। प्राय: सब सिद्धान्त स्वीकार कर लिये। अपने अनुकूल कुछ २ उनमें न्यूनाधिक भी किया। अब यहां से उनके मत की वृद्धि और पूर्व अनादिकाल से अविच्छिन्न आते हुये श्रीसम्प्रदाय की अवनति का आरम्भ हुआ। यह नूतन मत तब तक हो तो गया था पुष्ट; परन्तु संप्रदाय में गणना नहीं होती थी, अत: एक मत होकर विद्वानों ने इस मत को श्रीसम्प्रदाय में मिला दिया। इस समय इस पक्ष में अनेक विद्वान थे अत: उन्होंने नारायणमन्त्र और श्रीनारायणदेवकी उपासनाका महत्व प्रकटित किया। श्रीराममन्त्रका प्रचार शिथिल सा हो गया।

भगवान् श्रीराम ने अपने मन्त्रका ऐसा ह्रास देखकर उसके उद्धार की इच्छा से प्रयाग में श्रीरामानन्द स्वामी के रूपमें अवतार लिया। और भारत के एक सिरे से दूसरे सिरे तक श्रीराममन्त्र की गगनभेदिनी पताका फहरा दी। विखरे हुये साम्प्रदायिक सिद्धान्तों का उन्होंने पुन: संग्रह किया। इस 'पुन: संग्रह' के रहस्य को न समझकर अन्य जनता ने यह समझ लिया कि श्रीरामानुज स्वामी के सिद्धान्त इस श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में मिलते हैं अत: यह

सम्प्रदाय श्रीरामानुज सम्प्रदाय के अन्तर्गत है । श्रीरामानन्दस्वामी के श्रद्धालुओं ने विवेचन किया और दूध—पानी अलग कर दिया ।

अब इसके आगे श्री महाराजजी ने गुरुपरम्परा जैसे कठोर पथ में प्रयाण किया है। यह मार्ग सावधान होकर, पक्षपातरूप आवरण विमुक्त दृष्टि से देख 2 कर चलने योग्य है, मुझे आशङ्का है कि हमारे श्रीमहाराजजी के कोमल चरणों में कण्टक प्रवेश न करे।

श्री. स. दि. प्र. 13 पृष्ठ में महाराजजी ने श्रीरामार्चन पद्धति के तीन श्लोक उद्धृत किये हैं। जिनमें रामानुज स्वामी की परम्परा के अनुकूल श्रीरामानन्द सम्प्रदाय की परम्परा होने का समर्थन है। यहां हमारे श्रीगुरुजी महाराज को बड़े प्रयास के बाद कुशकाशावलम्बन मिला। परन्तु बात तो वही हुई कि खोदा पहाड, निकला चूहा, सो भी मरा हुआ'। जिस रामार्चन पद्धति को आप श्रीरामानन्द स्वामीजी कृत मानकर श्वासोच्छ्वास ले रहे हैं वह श्रीरामानन्द स्वामीजी कृत है ही नहीं। उसमें कारण सुनिये ।

'श्रीरामार्चन पद्धत्ति दो जगह से मुद्रित हुई है। एक तो

प्रभाकर में काशी प्रेस में 1935 विक्रम संवत् में श्रीसीताराम मिश्र ने छपाकर प्रकाशित की है और दूसरी ई० 1914 में लखनऊ में श्री पं० रामनारायणदासजी ने छपाकर प्रसिद्ध की है। दोनों में परस्पर अत्यन्त विरोध है। दोनों की परम्परा भी भिन्न है। नाम क्रम भी भिन्न है। नाम संख्या भी भिन्न है। जिन श्लोकों में परम्परा लिखी है। उनका छन्द भी भिन्न है। एकही महापुरुष एक विषय का प्रतिपादन दो भिन्न 2 विरोधी प्रकार से करे तो उसे उन्मत्त के सिवा दूसरा कोई क्या कहेगा।

आपको दोनों ही छपी रा०पद्धति माननीय है या नहीं? यदि माननीय है तो उपर्युक्त दोषों का परिहार करना भी आपका कर्तव्य है। यदि दोनों माननीय नहीं है तो एक के माननीय होने और एक के अमाननीय होने में क्या सद्धेतु है?

अब हम यहां पर वाचकवृन्दके अवलोकनार्थ श्री महाराजजी की परम प्रमाणीभूत परम्परा को यहां पर लिखते हैं। इससे स्पष्ट हो जायगा कि परम्परा का तत्त्व श्रीमहाराजजीने कितना समझा है।

श्री रामार्चन पद्धति सं.1935 को छपी हुई के अनुसार

गुरुपरम्परा—

1. श्री रामानन्द स्वामी
2. श्री राघवानन्दजी
3. श्रीहरियानन्दजी
4. श्रीश्रियानन्दजी
5. श्रीदेवानन्दजी
6. श्रीद्वारानन्दजी
7. श्रीरामेश्वरानन्दजी
8. श्रीगङ्गाधरजी
9. श्रीपुरुषोत्तमाचार्यजी
10. श्रीदेवाधिपाचार्य्यजी
11. श्रीवोपदेवकविजी
12. श्री माधवानन्दजी
13 श्री कूरेशजी
14. श्री रामानुजस्वामीजी
15. श्री पूर्णाचार्य्यजी
16. श्रीयामुनाचार्य्यजी
17. श्रीपुण्डरीकाक्षजी
18. श्रीनाथमुनिजी
19. श्रीशठकोप स्वामीजी
20. श्रीविश्वक्सेनजी
21. श्रीलक्ष्मीजी
22. श्रीनारायणजी

सन् 1914 ई. की छपी हुई श्रीरामार्चन पद्धतिके अनुसार

परम्परा—

1.	श्री रामचन्द्रजी	16.	श्रीबरवरजी
2.	श्रीसीताजी	17.	श्रीनरोत्तमाचार्य्यजी
3.	श्रीविष्वक्सेनजी	18.	श्रीगङ्गाधराचार्यजी
4.	श्रीशठकोपजी	19.	श्रीसदाचार्यजी
5.	श्रीनाथमुनिजी	20.	श्रीरामेश्वराचार्यजी
6.	श्रीपुण्डरीकाक्षजी	21.	श्रीद्वारानन्दजी
7.	श्रीराममिश्रजी	22.	श्रीदेवानन्दजी
8.	श्रीयामुनाचार्यजी	23.	श्रीश्यामान्दजी
9.	श्रीपूर्णाचार्यजी	24.	श्रीश्रुतानन्दजी
10.	श्रीरामानुजाचार्यजी	25.	श्रीचिदानन्दजी
11.	श्रीकूरेशजी	26.	श्रीपूर्णानन्दजी
12.	पराशरजी	27.	श्रीश्रियानन्दजी
13.	श्रीलोकाचार्यजी	28.	श्रीहर्यानन्दजी
14	श्रीदेवाधिपाचार्यजी	29.	श्रीराघवानन्दजी
15.	श्रीशैलेशजी	30.	श्रीरामानन्दस्वामीजी

यहां पर पाठक महानुभाव इतना ध्यान रखें कि हमने 1935.सं. की पद्धति के अनुसार जो परम्परा लिखी है यह

श्रीमहाराजजी के लेखानुसार है। असली श्लोक में तो सदाचार्य स्वामीजी का नाम भी है परन्तु उनपर कोई कानून लगाकर निर्वासित कर दिया गया है।

यहां पर हम एक प्रश्न और अपने श्रीमहाराजजी से पूछ लेना चाहते हैं। वह यह कि आपके कथनानुसार रामार्चन पद्धति में श्री रामानन्द स्वामीजी तो 'श्री जनकजारामं सदा संश्रये' लिखते हैं। श्रीजानकीजी और श्रीरामजीका नाम लिखते हैं परन्तु आपने लक्ष्मीनारायण का नाम कहां से ले लिया। क्या अब आपको भी लोकाचार्यजी और बरवर मुनिजी का सिद्धान्त प्रिय लगने लग गया है। जिस गद्दी में श्री रामजी और श्री जानकीजी ही परम देवाधिदेव माने गये हैं, जिस गद्दी में श्री जानकीजी की दी हुई वेंदी पूर्णशरच्चन्द्रकी तरह आज भी चमक रही है, उस गद्दी के अधीश्वर होकर आपको श्री राम और जानकी के नाम से इतना विरोध और इतनी घृणा क्यों?

श्रीमहाराजजी ! एक प्रश्न और पूछ लेने दीजिये। जिस समय आपने 'निजगुरु वृतान्त' छपाया था उस समय श्री रामार्चन

पद्धति संसार में थी अथवा वैकुण्ठ में? उस समय आपने उस पुस्तक में जो परम्परा छपाई है क्या उसपर हड़ताल फेर दी गई? क्या उसके अप्रमाणिक होने की सूचना वैष्णवजगद् को दे दी गई? यदि नहीं दी गई तो मुझे आज्ञा दीजिये। मैं सबसे कहं दूं कि जिस प्रकार से दोनों श्रीरामार्चन पद्धति की परम्परा अप्रमाणिक है उसी प्रकार से 'निजगुरु' में लिखी हुई परम्परा भी अप्रमाणिक है।

पाठकों के विनोदार्थ मैं 'निजगुरु' की परम्परा नीचे लिख देता हूं।

1.	श्रीनारायणजी	10.	श्रीपुरुषोत्तमाचार्य
2.	श्रीलक्ष्मीजी	11.	श्रीगंगाधराचार्य
3.	श्रीविष्वक्सेनजी	12.	श्रीसदाचार्य
4.	शठकोपजी	13.	श्रीरामेश्वराचार्य
5.	श्रीनाथमुनिजी	14.	श्रीद्वारानन्दजी
6.	श्रीपुण्डरीकाक्षजी	15.	श्रीदेवानन्दजी
7.	श्रीराममिश्रजी	16.	श्रीश्यामानन्दजी
8.	श्रीयामुनाचार्यजी	17.	श्रीरामानुजस्वामीजी
9.	श्रीमहापूर्णाचार्यजी	18.	श्रीगोविन्दाचार्यजी

19.	श्रीपराशरभट्टजी	26.	श्रीश्रुतानन्दजी
20.	श्रीवेदान्तीजी	27.	श्रीचिदानन्दजी
21.	श्रीकलिवैरीजी	28.	श्रीपूर्णानन्दजी
22.	श्रीकृष्णपादजी	29.	श्रीश्रियानन्दजी
23.	श्रीलोकाचार्यजी	30.	श्रीहर्यानन्दजी
24.	श्रीशैलेशजी	31.	श्रीराघवानन्दजी
25.	श्री वरवरमुनिजी	32.	श्री रामानन्दजी

पाठकों से यहां हम इतना निवेदन किये देते हैं कि वे लोग हमारे श्रीमहाराजजी से पूछे कि इन तीनों में से कौन परम्परा ठीक है। 23 अथवा 24 गुरुओंवाली, अथवा 30 गुरुओं वाली अथवा 32 गुरुओं वाली। एक बात और भी पूछ लें कि श्रीरामानन्दस्वामी जीने आपके मतानुसार जब श्रीरामार्चन पद्धति लिखी तो एक में माधवाचारी और वोपदेवजी को तो रख लिया और दूसरी पद्धति में निकाल दिया। इस दाखिल खारिज के रजिष्टर का क्या प्रयोजन था!

एक बात और सुन लीजिये। जिस बोपदेव कविको श्रीरामान्दस्वामी ने आपके मत से देवाधिपाचार्यजी का गुरु लिखा

है अर्थात् अपने से 11 पीढी पूर्व में लिखा है वह कविजी तो श्री स्वामीजी महाराज के समकालिक हैं, 11 पीढ़ी पूर्व में कहां से आ गये। इसमें प्रमाण सनातन धर्म के प्रसिद्ध प्रचारक पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र का तिमिर भास्कर है । उसमें उन्होंने प्रमाणित किया है कि –

गीतापर जो ज्ञानेश्वरी टीका है वह दक्षिण देश के अलन्दी ग्रामवासी ज्ञानेश्वर महात्मा की सं. 1347 में लिखी हुई है। यह टीका ज्ञानेश्वर महात्मा के द्वारा हेमाद्रिजी को मिली।। हेमाद्रिजी के यहां श्री बोपदेव कवि रहा करते थे अत: उनसे यह टीका इनको मिल गई। यहां पर यह स्पष्ट है कि हेमाद्रि और बोपदेव समकालिक है। अर्थात् आज से 633 वर्ष पूर्व ये दोनों महानुभाव विद्यमान थे । और संबत 1356 में श्रीरामानन्द स्वामीजी महाराज का अवतार हुआ अत: श्री स्वामीजी और श्री बोपदेवजी भी समकालिक हुये। श्री अनन्ताचारीजी की दृष्टि में बोपदेवजी नाथमुनिजी के समकालिक हैं। तो कहिये कि अपने समकालिक बोपदेवजी को अपने से 11 पीढ़ी पूर्व में अर्थात् हजारों वर्ष पूर्व में

मानने वाले श्री रामानन्द स्वामीको बुद्धिमान् इतिहासज्ञ संसार क्या कहेगा ? क्या आप यही कहलाना चाहते हैं? क्या श्री रामानन्द स्वामीजी के लिये ऐसे कुवाच्य शब्द सुनकर ही श्रीमान् का विशाल हृदय मन्दिर सन्तुष्ट होगा? सीताराम ! सीताराम ! !

अत: यह निर्विवाद सिद्ध है कि श्रीरामार्चन पद्धति को किसी वृद्ध महात्मा ने लिखी है। और आगामी पीढ़ी, को जाल में फंसा देने के लिये श्रीरामानन्द स्वामीजी का नाम लिख दिया है। अत: यह दोनों पद्धति सर्वथा अप्रामाणिक हैं ।

इसी प्रसङ्ग में 'श्रीरामानन्दीय वैष्णव मताब्ज भास्कर' के एक श्लोक के 14 अक्षरों से भी अपनी मनमानी परम्परा सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है वह अक्षर यह हैं–

'प्राचार्य्याचार्य्यवर्यान् यतिपतिसहितान्'

जिनको अक्षर बांचना आता होगा वह सब लोग समझ जायेंगे कि जब इसमें रामानुज स्वामी का नाम तक भी नहीं है तब जबर्जस्ती करने से क्या फल होता है। श्री रामानन्दीय वैष्णव जमींदारों की प्रजा तो दीन है नहीं कि जबरदस्ती आप उनसे

रामानुज स्वामी को गुरु मना ले।

श्रीस. दि. प्र. पृ. 15 पं 13 में प्रतिपादन किया गया है– कि मन्त्र भेद होने पर भी श्रीरामानुज सम्प्रदाय से श्रीरामानन्द सम्प्रदाय भिन्न नहीं है। क्यों कि नारायण मन्त्रोपदेष्टा को श्रीराममन्त्र देने का अधिकार है अत: श्रीरामानन्द स्वामीजी ने अपने शिष्यों की रुचि के अनुकुल राममन्त्र दिया है।

हम श्रीगुरुजी महाराजसे सविनय पूछते हैं कि आपको सिद्ध तो करना है सम्प्रदायाभेद और विचार करने लगे राममन्त्र के अधिकार का, ऐसा क्यों ? अच्छा ऐसा ही सही। 'समरथके नहिं दोष गुसाईं'। तो भी हम यह पूछते हैं कि क्या आप यह मानते हैं कि श्रीरामानन्दस्वामी नारायण मन्त्रके उपदेष्टा थे? यदि मानते हैं तो इसमें कोई भी प्रमाण दे सकते हैं? यदि नहीं दे सकते तो बृद्धहारीत के बचन की दुर्दशा करने के लिये क्यों तैयार हो गये? अच्छा अपने वृद्धहारीत के प्रमाणीभूत श्लोक को सुन लीजिये।

'अष्टाक्षरं द्वादशार्णं षडक्षरंवैष्णवं तथा।
रामकृष्णनृसिंहाख्यान्मन्त्रांस्तस्मै निवेदयेत्॥ '

क्या इस श्लोक से यह सिद्ध हो गया कि सब, सब मन्त्र का उपदेश अपने शिष्यों को करे? यदि ऐसा ही इसका तात्पर्य है तो क्या श्रीमान् ने आज तक अपने किसी भी शिष्य को नारायण मन्त्र देने की कृपा की है? श्रीराम ! श्रीराम !! यह हमने क्या कहा? भला आपको यह अधिकार कैसे मिले? यह पवित्र अधिकार तो आपके कथनानुसार ही नारायण मन्त्र के उपदेष्टा आचार्य को प्राप्त है आपके भाग्य में कहां?आपतो यह चाहते हैं कि श्रीरामानन्दीय वैष्णव पामर बनकर संसार में रहें । इसी लिये तो ऐसे ऐसे विचित्र श्लोक प्रमाण में देते हैं । नारायणमन्त्रोपदेष्टा आचार्यको तो यह सब उथल पुथल करने का अधिकार है परन्तु श्रीराममन्त्रोपदेष्टा को नारायणमंत्र देने का अधिकार है या नहीं? इसका उत्तर भला आप कैसे देंगे? क्योंकि लोकाचार्य और वरवरमुनि के सिद्धांत के अनुसार तो श्रीराममंत्रोपदेष्टा आचार्य्य ही नहीं है तो आप भला उनके सिद्धान्तसे विपरीत एक पद भी कैसे चल सकेंगे?

अच्छा अब शिष्योंकी रुचि की बात सुनिये । आप कहते

हैं कि शिष्यों को रुचि के अनुकूल राममंत्र अपने शिष्यों को स्वामीजी देते थे। यहां पर यह प्रष्टव्य है कि किन शिष्यों की रुचि आप लेते हैं? क्या जिनको पहले नारायणमंत्र देकर स्वामीजी ने शिष्य बनाया था उनकी रुचि से उनको श्रीराममन्त्र दिया? यदि यह आपका तात्पर्य है तो क्या कृपाकर यह कह सकते हैं कि नारायणमंत्र वालों की श्रीराममंत्र में रुचि क्यों हुई? क्या मोक्ष की इच्छा से अथवा लोकाचार्य और वरवर मुनि के कथनानुसार पुत्रकलत्रादि की इच्छा से? यदि मोक्ष की इच्छा से, तो क्या नारायणमंत्र से मोक्ष नहीं मिल सकता था? यदि पुत्रकलत्र की इच्छा से, तो क्या आप यह मानते हैं कि श्रीराममंत्र से मोक्ष नहीं मिलता किन्तु बेटा बेटी ही मिला करती है? तथा क्या नारायण मन्त्र से बेटा बेटी नहीं मिल सकती थी?

एक बात और आपसे पूछना चाहता हूं कि यह राम मंत्र की रुचि नवीन उत्पन्न हुई अथवा प्राचीन? यदि नवीन रुचि थी तो इसका यह अर्थ है कि तबतक श्रीराममंत्र संसार में प्रचलित नहीं था। तब तो श्रीराममंत्र का प्रचार अनादि काल से तो सिद्ध नहीं

हुआ। क्या आपको यह स्वीकृत है? यदि रुचि प्राचीन थी तो इसका यह अर्थ है कि श्रीराममंत्र का प्रचार पहले भी था? तब तो श्री राममन्त्र के प्रचारक गुरुओं की परम्परा बतानेकी कृपा करिये । क्या यही सब गड्ड बड्ड परम्परा जिसकी अनर्थकता और दुर्थकता सिद्ध की जा चुकी है? तब तो इस परम्परा से श्री राममन्त्र का अनादि प्रचार त्रिकाल में भी सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि श्री रामानन्दस्वामी के समय से ही से श्री राममंत्रका प्रचार आपकी परम्परा से सिद्ध होता है। तब क्या आप अन्त में वही परम्परा मान लेंगे जिसे श्रीमद् अग्रस्वामीजी ने लिखा है और सम्पूर्ण संत महंतो ने एक स्वर से उज्जैन में स्वीकार कर लिया है?

एक बात और। जब श्रीरामानन्द स्वामीजी आपके सिद्धांतानुसार नारायणमन्त्र और राममंत्र दोनों का उपदेश करते थे तबतो सब रामानुजीय लोगों के साथ समता हो गई क्यों कि आप पहले लिख चुके हैं कि सब नारायण मन्त्रोपदेष्टा को राममन्त्र देने का अधिकार है। फिर किस अपराध से श्रीरामानन्दस्वामी आचारी लोगों की पंक्ति से पृथक् कर दिये गये?

एक बात और। जब सब नारायणमन्त्रोपदेष्टा को श्री राममन्त्र का अधिकार है तब श्रीरामानन्द स्वामीजी ही राममन्त्र के परमाचार्य्य क्यों माने गये? यदि कहिये कि विशेष प्रचार किया तब बताइये कैसी विशेषता आप मानते हैं? क्या यह कि जिसकी रुचि राममन्त्रमें नहीं थी उनको भी राममन्त्रोपदेश दिया? तब तो आपके पूर्व कथन से परम विरोध प्राप्त हुआ? यदि यह कहें कि जिसकी रुचि होती थी उसको राममन्त्र देते थे तब तो यह कोई विशेषता ही नहीं हुई! यह तो सर्व साधारण बात हो गई।

अच्छा अब श्रीरामानन्दीय वैष्णवों का सिद्धांत सुनिये। श्रीरामानन्द स्वामी न तो नारायणमन्त्र के उपदेष्टा थे और न नारायणदेव के उपासक। वह तो केवलराममन्त्रके प्रचारक और श्रीरामजी के उपासक थे। जैसाकि व्यासजी ने लिखा है–

बाल्यात्प्रभृति स ज्ञानी रामनामपरायणः।
मात्रा पित्रा परित्यक्तो राघवं शरणं गतः॥

अर्थात् श्रीरामानन्द स्वामीजी बाल्यावस्था से ही राम–नाम परायण थे। अतएव स्वामीजी महाराज ने श्रीरामानन्दीयवैष्णवमताब्जभास्कर के आरम्भ में श्रीरामजी महाराज की

ही वन्दना की है । यथा—

'रामं स्मेरमुखाम्बुजं शुचिमहानीलाश्मकान्तिं भजे'

इसी तरह से

'धन्यो नो मङ्गलौघं सपदि सुकुरुताद्रामशस्त्रास्त्रसंघः'

इस श्लोक से रामजी के शस्त्र अस्त्र से मङ्गलकी प्रार्थना की गई है। इसी तरह से

'दत्तान्नोऽखिलसम्पदो जनकजा रामप्रिया साऽनि शम्'

इस श्लोक से श्रीरामप्रिया जनकजा—जानकीजी से अखिल सम्पत्ति की प्रार्थना की है।

विज्ञाय राघवानन्दं लब्ध्वा तस्मात्षडक्षरम्।
रहस्यत्रयवाक्यार्थं तात्पर्यार्थं च सन्मतम्॥

कृपया यस्य लोकेऽस्मिन्जनाः सर्वे निरामयाः।
श्रीरामभक्तिनिरताः सदा धर्मपरायणाः॥'

रामानन्दो रामरूपो राममन्त्रार्थवित्कविः।
राममन्त्रप्रदो रम्यो राममन्त्ररतः प्रभुः॥

इत्यादि शास्त्रीय वचनों से भी यही सिद्ध होता है कि

श्रीरामानन्द स्वामीजी कभी नारायणमन्त्र और नारायण भगवान् के उपासक नहीं थे। केवल श्रीराममन्त्र के परम प्रचारक और उद्धारक होने के कारण ही हम लोग उन्हें अपना परमाचार्य्य मानते हैं।

आगे चलकर इसी पृष्ठ की 9 वीं पंक्ति में लिखा है कि यदि केवल श्रीराममन्त्र के भेद से दोनों सम्प्रदायों का भेद माना जायेगा तो श्रीरामनवरत्नसार रहस्य में कहे गये अनेक मन्त्रों के भेद से रामानन्द सम्प्रदाय से पृथक् किसी अन्य सम्प्रदाय की स्थिति स्वीकार करनी पडेगी। अवश्य यह दोष हमारे सिर आता; परन्तु उस दशा में जब कि हम केवल मन्त्रमात्र के भेद से सम्प्रदाय भेद स्वीकार करते। हमतो कहते हैं कि मन्त्र का भेद सम्प्रदाय भेद में प्रधानतया कारण है परन्तु अनेक भेद जो ऊपर दिखाये गये हैं वह भी दोनों सम्प्रदायों के भिन्न होने में हेतु हैं।

श्री स. दि. प्र. के पृ. 17 पं. 6 से लेकर पुस्तक के अन्त तक श्रीराम नारायण और श्रीसीता लक्ष्मीका अभेद सिद्ध किया गया है। इसी प्रसङ्ग में श्री अग्रदास स्वामीजी की लिखी हुई

परम्पराकाभी खण्डन किया गया है। उसमें हेतु यह दिया गया है कि श्रीरामानन्द सम्प्रदाय में रामानुज सम्प्रदाय की तरह रहस्यत्रय का उपदेश होता है परन्तु ब्रह्म आदि के सम्प्रदाय में रहस्यत्रयोपदेश नहीं होता है अतः ब्रह्मा, वसिष्ठ आदि की गुरुपरम्परा श्री रामानन्दीय वैष्णवों की परम्परा नहीं हो सकती। तथा ब्रह्मा आदि के सम्प्रदाय में पञ्च संस्कार भी नहीं हैं इस लिये भी उनका सम्प्रदाय श्री रामानन्द सम्प्रदाय नहीं हो सकता।

इसका उत्तर यह है कि ब्रह्मादिकों के सम्प्रदाय में रहस्यत्रय उपदेश नहीं होता है। इसमें क्या प्रमाण है? क्या उन श्लोकों में स्पष्ट लिखा नहीं है इसीलिये ऐसा आप मानते हैं? यदि ऐसा हैं तो यह ठीक नहीं। क्योंकि वहां प्रधानतया राममन्त्रोपदेश का उल्लेख है, परन्तु वह रहस्यत्रय का उपलक्षक है। अतः ब्रह्मादि का सम्प्रदाय ही श्रीरामानन्द सम्प्रदाय है।

श्रीरामानुज सम्पदाय में रहस्यत्रयोपदेश मूल में कहां है? क्या आप बताने की कृपा करेंगे? श्रीमदनन्ताचार्य स्वामीजी ने रहस्यत्रय में लिखा है कि श्रीमन्नारायण ने बैकुण्ठ में लक्ष्मीजी को

द्वय मन्त्र का उपदेश दिया। बदरिकाश्रम में नरको अष्टाक्षर मन्त्र का उपदेश हुआ । कुरुक्षेत्र में, भगवान ने अर्जुन को चरममन्त्रका उपदेश किया।

श्रीरामानुज सम्प्रदाय में पञ्च संस्कार भी आरम्भ से नहीं है। श्रीशठकोप स्वामीजी के लिये लिखा है कि विष्वक सेनजी ने अपनी कृपा से गर्भ में ही उनको ज्ञानोपदेश कर दिया था। परन्तु तप्तमुद्राद्रि संस्कार कब हुये इसका अभी तक कुछ पता नहीं है। ऐसे ही नाथमुनिजी के भी पञ्च संस्कारों का वर्णन कहीं नहीं है।

अब श्रीराम और नारायण के अभेद की बात सुनिये। आपने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि श्रीरामजी और श्रीनारायणजी का स्वरूपाभेद है। परन्तु यह सर्वथा असत्य है। यदि श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के सिद्धान्त श्रीचरण भले प्रकार मनन किये होते तो कभी भी ऐसा नहीं लिख सकते थे। मैं यहां पर सप्रमाण बता देना चाहता हूं कि श्रीराम और नारायण में स्वरूपाभेद नहीं है । सुनने की कृपा करिये नारदपंचरात्रपाद्मसंहिता में लिखा है कि—

'मरीचिमण्डले संस्थं वाणाद्यायुधलाञ्छितम्।
द्विहस्तमेकं वक्त्रं च रूपमाद्यमिदं हरेः॥''

देखिये यहां पर भगवान के द्विभुज रूप को ही सनातन और आदि रूप लिखा है । वेद भी द्विभुज का ही वर्णन करते हैं सुनिये–

मुखं किमस्यासीत्‌किंबाहू किमूरू पादावुच्येते।

वेद में यह प्रश्न किया कि भगवान का मुख क्या है? भगवान की दोनों भुजाएं कौन हैं? एवं दोनों जांघें और पैर कौन हैं? इसका उत्तर दिया कि –

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः'

अर्थात् भगवान् के मुखस्थानीय ब्राह्मण हैं। क्षत्रिय दोनों भुजा के समान हैं। देखिये, यहां पर श्रुति ने स्पष्ट कह दिया कि भगवान् द्विभुज हैं, चतुर्भुज नहीं। जहां 2 चतुर्भुज स्वरूप का वर्णन है वहां या तो शक्ति स्वरूपा श्रीजानकीजी और श्रीरामजी दोना को अभेद समझकर दोनों की दो भुजाएं मिलाकर 4 का उल्लेख किया गया है और या तो नारायण अवतारीय स्वरूपका वर्णन है। यही समझकर गलता आश्रम से श्रीमधुराचार्यजी ने भी

रामविजय सुधाकर में लिखा है कि–

'द्विभुजं जानकीनाथं सच्चिदानन्दविग्रहम्।

अर्थात् सत् चित् और आनन्द स्वरूप श्रीजानकीपति भगवान् द्विभुज हैं। अतः बृहद् ब्रह्मसंहिता और पद्मपुराण में जो चतुर्भुजरूप का वर्णन है वह सब नारायण अवतार संबंधी स्वरूप का वर्णन है वस्तुतः भगवत्स्वरूप का नहीं। यदि वस्तुतः स्वरूप होने का आग्रह किया जायेगा तो वह सब वचन श्रुतिस्मृति और हमारे सम्प्रदाय के सनातन परम्परा से चले आते हुये आचार और व्यवहार से विरुद्ध होने के कारण त्याज्य हैं।

श्रीमद्वाल्मीकि रामायण में जो "आयताश्च सुवृत्ताश्च" इत्यादि श्लोक में "बाहवः" यह बहुवचन पद आया हुआ है वह आदरार्थ है। अथवा वहां पर श्रीरामजी और लक्ष्मण जो दोनों का साथ वर्णन है अतः दोनों भाइयों की भुजा के लिये बहुवचन है । श्रीरामजी के चार बाहुओं का वर्णन नहीं है। उस प्रकरण को एक बार श्रीमान् पुनः पढें।

अरे दुष्ट पक्षपात पिशाच! तेरा बुरा हो। सैकड़ों बार तुझे धिक्कार है। तेरी ही दुष्टता से हमारे परमाराध्य श्री– गुरुजी

महाराज अपनी प्रतिज्ञा तोड़ बैठे। श्रीमहाराजजी ने जो अपनी भूमिका में बड़े प्रयत्न से 'कृत्याकरण' और अकृत्यकरण' का विवेक किया है आज स्वयं उस विवेक से पृथक् हो गये। वहां तो प्रतिज्ञा की है, और शासन किया है, उपदेश किया है कि—'हम लोगों को सर्वथा उचित है कि श्री रामानन्दस्वामीजी ने हमारे हित के लिये कृपाकर स्वयं बनाये हुये वैष्णवमताब्ज भास्कर और रामार्चन पद्धति में हमारे प्राप्य की प्राप्ति के लिये आज्ञा करी है उस आज्ञाओं के अनुगुण हम लोग वर्तें और उनके विरुद्ध हम न चलें।' यहां हमारे श्री महाराजजी इस उपदेश से स्वयं विपरीत मार्ग में गमन करने लगे। हमारे महाराजजी को बहुत दूर की यह बात तो याद आ गई कि 'अगस्य संहिता मे 'ध्यात्वा वीरं परं ब्रह्म' इत्यादि श्लोक से, राममन्त्र के जपके समय में चतुर्भुज भगवान् का ही ध्यान करना चाहिये परन्तु वैष्णवमताब्जभास्कर में श्रीरामानन्द स्वामीजी महाराज की यह दिव्य आज्ञा नहीं याद आई कि—

अथोच्यते महाभाग! ध्यानं ध्येयस्य चिन्तनम्।
बुधैरात्मरतैर्नित्यं जितप्राणैर्जितेन्द्रियैः।।53।।
मुनिमनःसुमधुव्रतचुम्बित-
स्फुटलसन्मकरन्दपदाम्बुजम्।।।

बलवदद्भुतदिव्यधनुःशरा-
महितजानुविलम्बिमहाभुजम्॥45॥

अर्थात् श्री रामानन्द स्वामीजी महाराज श्रीसुरसुरा-नन्दजी से कहते हैं कि 'हे सुरसुरानन्द जिन भगवान् का ध्यान मुनिजन नित्य किया करते हैं, जिनके दोनों हाथों में दिव्य धनुष और बाण विराजमान हैं, जिनकी लम्बी भुजाएं हैं ऐसे दशरथ राजकुमार श्रीराम का ध्यान करना चाहिये।' यह श्री स्वामीजी की आज्ञा है जिसे महाराज भूल गये। चतुर्भुज नारायण याद आ गये। हमको भय है कि हमारे श्री महाराज की अटल, अचल, अविकल श्रद्धा के वश होकर कहीं बड़ी जगह के धनुषधारी भगवान् चतुर्भज रूप न ग्रहण कर लें ! अस्तु, अब हमारे अभेद का प्रकार सुनिये। हम दोनों देवों में अभेद मानते हुये भी श्रीराम को पर और अवतारी तथा श्रीनारायण को अवतार मानते हैं। यही बात श्रीमद्वाल्मीकि संहिता में भी लिखी है। यथा—

'परो हि भगवान् रामः परलोके विराजितः।'

बस श्रीरामानन्द सम्प्रदायकी यही मर्यादा है। इसके भीतर ही रहकर हम श्रीराम और नारायण, एवं श्री जानकी और लक्ष्मी का अभेद सम्भव प्रकार से स्वीकार करेंगे।

यदि—आप

'आदिभूता महालक्ष्मीः सीता तु विभवे मता।

आविर्भावे क्षितौ जाता जानकी दिव्यरूपिणी।।

'सीतालक्ष्मीर्भवान् विष्णुः'

इन सब श्लोकों के उत्तर का आग्रह करेंगे तो हम भी प्रार्थना करेंगे कि कृपा करके—

श्रियः श्रीर्भर्तृवत्सलाम्' और

'जासुअंश उपजहिं गुनखानी

अगणित उमा रमा ब्रह्माणी।

'सहस्र नाम सदृशं विष्णोर्नारायणस्य च'

'वायुपुत्रं विघ्नेशं वाणीं दुर्गां क्षेत्रपालकं सूर्य्यं चन्द्रं नारायणं नृसिहं वासुदेवं... एतानि रामस्याङ्गानि जानीथाः।' रामरहस्योपनिषद्।

'वासुदेवादिमूर्तीनां चतुर्णां कारणं परम्।

चतुर्विंशतिमूर्तीनामाश्रयः शरणं मम।।'

इत्यादि मन्त्र श्लोक और चौपाई का समाधान करने का कष्ट करें। शुभ मस्तु.

समाप्ता श्रीसम्पदायरक्षा

श्रीः

रामानन्दीय वैष्णव महानुभाव!

आज मैं आपकी दृष्टिको अन्य सम्प्रदायों की ओर खींचना चाहता हूं। कृपाकर विचार करें। देखिये ईसाई लोगों ने अपने मार्ग प्रदर्शक प्रभु ईसा मसीह को इतना मान दिया कि उन्हें परमेश्वर का इकलौता बेटा बना डाला और उनके बिना किसी को स्वर्ग को सीढ़ी पर पग रखने का अधिकार निर्मूल कर डाला। मुसलमान भाइयों ने अपने पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहेब को इतना अधिक मान दिया कि कुरान की आयत में खुदा के साथ उनका नाम जोड दिया। तथा प्रत्येक क्रिया उनके नाम के साथ आरम्भ करने लगे। बौद्धों के धर्मगुरु बुद्ध भगवान का तो इतना मान हुआ कि बुद्धानुयायियों के अतिरिक्त हिन्दू धर्म ने भी उन्हें प्रभु का अवतार बताया। जैन भाइयों ने भी जीवों को पकड़ कर ऐसा पक्का ईश्वर बनाया कि हरि, हर, ब्रह्मा, इन्द्रादि देवो को तीर्थङ्करों का दास बनाने में लज्जा, शर्म और मनुष्यत्व को त्याग कर हठधर्मिता के नग्न रूप को दिखाने में हिन्दू धर्म की कुछ भी परवा नहीं की। अद्वैत वादियों ने श्री स्वामी शङ्कराचार्यजी को

शङ्करजी का अवतार मानकर यथायोग्य सत्कार किया। अपने चतुः सम्प्रदाय के अन्य वैष्णवों ने भी अपने 2 आचार्य्यों का पूर्ण रूप से मान किया। परन्तु हम रामानन्दीय वैष्णवों ने अपने परमाचार्य्य रामानन्द स्वामीजी महाराज के लिये क्या किया, यह विचारणीय है! हमारे शास्त्रों में अनेकों स्थल में श्री रामानन्द स्वामीजी को साक्षात् प्रभु का रूप लिखा है। भगवदवतार लिखा है । रामानन्दः स्वयं हरिः' इत्यादि लिखा है ! परन्तु हम लोगों ने उनको वह मान नहीं दिया, जो कि एक अवतारी महापुरुष के लिये योग्य है । जिस आचार्य के अनुयायी इतने अधिक हो कि जिनकी संख्या के आगे अन्य सम्प्रदायियों की संख्या किसी गिनती में नहीं आ सकती उस आचार्य का इतना अल्प मान देखकर किसका हृदय नहीं फटता होगा। क्या हमारा यह धर्म नहीं है कि हम अपने नित्यकर्म के साथ अपने परमाचार्य्य भगवान् रामानन्द स्वामीजी का स्मरण, ध्यान आदि करें? क्या हमारा परम कर्तव्य नहीं है कि रामानन्दस्वामी जी के स्तोत्रों को कण्ठस्थ कर लें और नित्य पाठ करें?' क्या हमको उचित नहीं है कि प्रातः

और सायंकालकी आरती में रामानन्द स्वामीजी की जय बोलें तथा उनके स्तोत्रों में से दो चार श्लोकों का पाठ करें? सब कुछ है लेकिन' विवेकभ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः' भगवान ने हमसे विवेक ही छीन लिया। किसका दोष दें। अस्तु 'जब से जागे तब से सवेरा' मानकर आजसे प्रत्येक रामानन्दीय श्री वैष्णवों को उचित है कि वह भगवान् के सामने व्रत ले लें, प्रतिज्ञा कर लें, कि जबतक हम श्री रामानन्द स्वामी का अपने नित्य कर्म के साथ स्तोत्रादि द्वारा स्मरण नहीं कर लेंगे तब तक अन्नजल नहीं ग्रहण करेंगे। देखिये, ऐसा करने से आपके हृदय में कितना आनन्द उत्पन्न होगा ! सम्प्रदायी होने का शुद्ध अभिमान जागृत होगा। 'आचार्यवान्' होने का परम पवित्र भाव हृदय में आ जावेगा और उस दिन हमारी सब निर्बलता हमारे में से दूर भाग जायगी। प्रभु करें ऐसा ही हो।

प्रार्थी

भगवद्दास ब्रह्मचारी.

हिन्दी कवित्त

(1)

विद्वद्वरिष्ठ ब्रह्मनिष्ठ वर्चस्व युत विद्या के वारिधि वरवन्द्य सुवदान्य हैं।

वन्दनीय वयोवृद्ध वाद-प्रतिवाद माँहि व्यासदेव के समान ख्यात सम्मान्य हैं।

विजयी विवेकशील विजगीषु विद्याधर कुत्सित विरक्त व महान् महामान्य हैं।

सार्वभौम सत्ताधीश पंडितसम्राट् आदि तेरी बराबरी न कोऊ अन्यान्य हैं।

(2)

सम्प्रदायरक्षक सम्प्रदाय उत्थान हेतु जीवन अशेष जो जीवन बिताये हैं।

सम्प्रति सम्प्रदायहित अनेक सद्ग्रन्थरचि सम्प्रदाय उन्नति की चोटी चढ़ाये हैं।

सम्प्रदाय के लिए अनेक शास्त्रार्थ कर सम्प्रदाय-गौरव व महिमा बढ़ाये हैं।

गाउँ कहाँ लौं तेरे अमित अनन्त गुण देखि बुद्धिवैभव को शत्रु शरमाये हैं।

(3)

कर्मशील धर्मशील विद्या-विवेकशील सद्गुणागार प्रियपूत देव अंश है।

आकृति सुहासभास संस्कृति प्रभासरम्य प्रकृति मिठास औ सर्व पापध्वंस है।

कोमल स्वभाव सद्भावना से ओतप्रोत कछु न दुराव है न किंचित् नृशंस है।

ख्यातिप्राप्त नाम जासु ऐसे श्री स्वामी जी जनता से पूज्य सत् श्रेष्ठ परमहंस हैं।

(4)

श्रीमान् धीमान् शिष्ट सौजन्ययुत वेदपथगामी न्याय नीति के निधान हैं।

संयमी संरक्त सिद्धि संसृतिविहीन और स्थापक वेद धर्म नीति उद्यमी महान हैं।

तन्मय तपस्या में विद्वत् विद्यार्थी हेतु तार्किक तरंगी भी साधक सुजान।।

सूर्यवत् सूचित हैं सूचनीय कार्यशील विद्यानुरागी वीर वैष्णव प्रधान है।